ॐ शूलिनीदेव्यै नमः

जय बघाटेश्वरी मां शूलिनी

(बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं)

दर्शनीय माँ शूलिनी देवी

आ. डा. लेखराम शर्मा

जय बघाटेश्वरी माँ शूलिनी

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

साभार नमन

मैं अपनी पूर्व पुस्तक “क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव” में रह गई अनेक भूलों के बावजूद भी उसके प्रति दर्शाए गए अपने प्रेमी पाठकों के स्नेह से अभिभूत हूँ। उक्त पुस्तक को पाठकों तक पहुँचाने के लिए बीजेश्वर देवता के पुजारी पं0 श्री मनी राम जी एवं भाग्योदय ज्योतिष कार्यालय के संचालक पं0 श्री सतीश जी आदि अनेक महानुभावों का हार्दिक योगदान रहा है। मेरी प्रकाशन सम्बन्धी रूचि को प्रोत्साहित करने के लिए मैं मान्य स्वास्थ्य मन्त्री डा0 राजीव बिन्दल जी, विधायक महोदय डा0 राजीव सैजल जी, लोकमान्य पत्रकार पं० सन्त राम शर्मा जी, श्री बालकृष्ण शास्त्री (शुंगल) और अन्य अनेक सम्मान्य भाई-बहनों के स्नेह को कभी भूल नहीं सकता। इस बार मैं अपने शिरीषीय गर्ग परिवार के भगवती मातृशक्ति के परम सात्विक एवं समर्पित भक्त तथा माँ शूलिनी के पुरोहित परम् पूज्य चाचा पं0 श्री मुनि लाल जी के निष्काम स्नेह से “जय बघाटेश्वरी माँ शूलिनी” पुस्तक को लेकर प्रस्तुत हुआ हूँ। आप सभी आदरणीय महानुभावों को साभार हार्दिक नमन।

जय माँ शूलिनी।

विनीत: लेखक/प्रकाशक

शुभाशीः

मुझे आ 0 डा0 लेखराम शर्मा की रचना "जय बघाटेश्वरी माँ शूलिनी" को देखने और समझने का सुखद मौका मिला। इसमें बघाट की सनातन शाक्त एवं आध्यात्मिक परम्पराओं को ऐसे समय में समाज के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है जबकि उक्त परम्पराओं पर विस्मृति की धूल पड़ती जा रही है। इस प्रसंग में यह बताना अनुचित न होगा कि यह प्रयास उन्हीं आदरणीय पूर्वजों के जीवनाभियान का एक हिस्सा है जिसके तहत उन्होंने सरल, सादे और निष्काम जीवन द्वारा आने वाली पीढ़ी के लिए अमृत संजो कर रखा है। हमारे पूर्वज, माताएं और बुजुर्ग धन्य हैं जिन्होंने अपनी संघर्षपूर्ण आजीविका के बावजूद धर्मग्रन्थों और मूर्तियों आदि के प्रति अटूट आस्था के माध्यम से इन परम्पराओं को हम तक पहुँचाया। इतना ही नहीं "यथा राजा तथा प्रजा" के अनुसार यहाँ के पावन राजवंश द्वारा भी इस अभियान को अविस्मरणीय बल मिला। कृतिकार ने इन सनातन परम्पराओं को अपना मौलिक स्पर्श देकर एकत्र संजोने का प्रयास किया है। आशा है इससे पाठकों को अपने सर्वांगीण विकास में कुछ न कुछ सहयोग अवश्य मिलेगा। इस रचना की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

संत राम शर्मा, वरिष्ठ पत्रकार एवं अध्यक्ष, बघाटी सामाजिक संस्था, सोलन, हि0 प्र 0

(“क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव” पुस्तक सम्बन्धी विचार)- एक पुस्तक-पाठक की कलम से

रंगीन आवरण पृष्ठ पर 'देवथल' का चित्र पुस्तक के प्रति आकर्षण उत्पन्न करता है। पुस्तक को चार भागों में बांटकर पुस्तक की उपादेयता में वृद्धि की है। इससे पाठकों को अलग-अलग जानकारी प्राप्त करने में सुविधा रहेगी। प्रथम भाग में देव परिचय दिया गया है। द्वितीय भाग में देवक्षेत्र शिरीष भोज का जनजीवन अनुवाद-टिप्पणी सहित देकर पाठकों को समझने में सरल किया है। तीसरे भाग में बीजेश्वर क्षेत्र में प्रचलित पूजन परम्परा को बड़े ही सटीक ढंग से समझाने का सार्थक प्रयास सराहनीय है। चौथे भाग में परिशिष्ट रूप में शूलिनी विकासादि विषयों की संक्षेप में सटीक जानकारी बेहद सार्थक व उपयोगी है।

कुल मिलाकर पुस्तक स्तरीय, पठनीय, शिक्षाप्रद, ज्ञानप्रद व जानकारीपूर्ण है जिसे पढ़कर पाठकों को क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव के विषय में विस्तृत एवं यथार्थ जानकारी मिलती है। कृति संग्रहणीय है। लेखक का प्रयास सार्थक व सराहनीय है। उत्कृष्ट कृति हेतु कोटि-कोटि साधुवाद।

आपका भाई, विजय सिंह बलवान, जटपुरा (जहांगीराबाद), बुलन्दशहर (उ 0 प्र 0)-2023 94

समर्पण

असली प्रेम वही है जिसको दूसरों की पीड़ा नजर आती है। प्रेमी का परमात्मा दुःखियों के दरवाजे पर रहता है। प्रेमी की नजर में समाया हुआ परमात्मा वहीं दिखाई देता है जहाँ भी उसकी नजर जाती है। भगवान् अपने प्रेमी से दूर जा ही कैसे सकते हैं। हृदय की पकड़ बड़ी मजबूत होती है। वे हार जाते हैं इस धर-पकड़ में।

करबद्ध निवेदन

भगवती माँ शूलिनी की स्नेहमयी कृपा एवं प्रेरणा से "जय बघाटेश्वरी माँ शूलिनी" नामक छोटी सी रचना आपके कर-कमलों में सौंपते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। इसके अंदर मैंने पावन भूमि बघाट (सोलन क्षेत्र) में परम्परा से चले आ रहे भगवती मातृ शक्ति के प्रति प्रेम, श्रद्धा और उपासना तथा तदनुसार व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक जीवन को दर्शाने का 'छोटे मुँह बड़ी बात" जैसा प्रयास किया है। सत्य या शक्ति के अनंतरुपों में से एक इस प्रयास जैसा भी हो सकता है, आशा है इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए मेरे प्रति पूर्ववत् प्रेम बनाए रखेंगे। जय माँ परमशक्ति।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित

आपका अपना लेख राम शर्मा, शूलिनी मेला, संवत् 2068 (26-6-2011)

विषय सूची

बघाट का ऐतिहासिक स्वरूप और जन - जीवन।

बघाट का ऐतिहासिक स्वरूप, कुछ दर्शनीय स्थल, बघाटराज दुर्गा सिंह का प्रेरक जीवन, गाँव -गाँव में पूजित काली माता, परम्परागत धार्मिक संस्कार, एक प्रेरक सुसंस्कृत जीवन, भ्रष्टाचार के सफाए की प्रेरणा, राम मन्दिर आध्यात्मिक परम्परा का प्रतीक, लघु बघाट ड्यारशघाट, अपना हाथ जगन्नाथ, ब्राह्मण का कर्त्तव्य।

बघाटी जन- जीवन में शक्ति पूजा।

अश्वपतिकृत गायत्री स्तवराज, मातृशक्तिविज्ञान, गायत्री -संध्याविज्ञान, गायत्री मंत्र के अर्थ का विज्ञान, गायत्री विज्ञान का रहस्य, स्नेहमयी माँ शूलिनी दुर्गा, घर-घर में उपासित माँ, संसार परमशक्ति का विलास, राजपरम्परा में तारा माँ, संसार परमशक्ति का विलास, राजा दुर्गा सिंह का शाक्त जीवन।

बघाटी जन- जीवन में अध्यात्म विज्ञान।

आत्मानुभव का व्यवहार में प्रयोग, मानवीय गुणवर्धक संस्कार विज्ञान, जीवन विज्ञान, जीवन को अध्यात्म से जोड़ने वाली तारा माँ, सनातन जीवन धारा में अध्यात्मविज्ञान, कार्यव्यवहार में आत्मा की अनुभूति का विज्ञान, सर्वांगीण उन्नतिदायक अमृतवचन, आध्यात्मिक व्यवहार में सहायक सुसंस्कृत वचन, तीसरी आँख, भारत की उन्नति में आत्मज्ञान का उपयोग, प्रेम के अन्दर बसता है परमात्मा, हमारे दैनिक व्यवहार में परमात्मा की झलक, संपूर्ण सुखदायक आध्यात्मिक सूत्र, गायत्री मंत्रार्थ में परमात्मानुभव, अध्यात्म जीवनदृष्टि, व्यापक सोच व्यापक जीवन।

परिशिष्ट - बघाट की अन्य विशेषताएं।

व्यापक हित के समर्थक थे राजा दुर्गा सिंह, जब एक क्रान्तिकारी ने कायलर गांव को धन्य कर दिया, सेना का मनोबल बढ़ाता है एक गड़खल निवासी, अहिंसक तरीका ही बचा सकता है फसलों को बंदरों से, बीजेश्वर मंदिर प्रबंधक समिति - एक कल्याणे की नजर में, गायत्री माता का भंडारा यज्ञ, काली विज्ञान, कुंडलिनी जागरण का मनोविज्ञान, ड्यारशघाट का जग, शक्तिपर्व के नो दिन, ब्राह्मण का जीवन लक्ष्य, सर्वसुलभ वेदान्त विज्ञान, सर्वसुलभ तीर्थ माया पुरी या हरिद्वार, सनातन जीवन विज्ञान, गायत्री संध्या का मनोविज्ञान, शरड- धम्- भैं-रा मतलब, परोपकार की भावना से बनी बावड़ी, अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं को कैसे बचाएं आदि।

विशेष चित्र सौजन्य- श्री गणेशदत्त शर्मा, पूर्व बी.डी.सी मेंबर

साधारण चित्र सौजन्य - दैनिक भास्कर व दिव्य हिमाचल

प्रेरणादि सौजन्य - समस्तगुरुजन, विद्वान्, लेखक और पाठक तथा पूज्या माता जी, धर्मपत्नी एवं समस्त परिवार

इस पुस्तक का विशेष प्रयोजन

महापुरुषों के वचनानुसार पुस्तकें हमें अपनी पहचान करवाने में मदद करती हैं। यही इस पुस्तक का भी लक्ष्य है। परिणाम पाठकों पर छोड़ता हूँ। हार्दिक शुभकामनाएं।

कुलपूर्वज राजपुरोहित पं0 श्री मुनिलाल जी से प्राप्त आशीर्वाद स्वरूप

ब्रह्मरूपकं विश्वविजयं नाम कवचम्

ब्रह्मन्ब्रह्मविदां श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानविशारद। सर्वज्ञ सर्वजनक सर्वेश सर्वपूजित।। सरस्वत्याश्च कवचं ब्रूहि विश्वजयं प्रभो। अयातयामं मन्त्रणां समूहसंयुतं परम्।। ब्रह्मोवाच शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि कवचं सर्वकामदम्। श्रुतिसारं श्रुतिसुखं श्रुत्युक्तं श्रुतिपूजितमं। उक्त कृष्णेन गोलोके मह्यम् वृन्दावने वने। रामेश्वरेण विभुना रासे वै रासमण्डले।। अतीव गोपनीयं च कल्पवृक्षसमं परम्। अश्रुताद्भुतमन्त्राणां समूहैश्च समन्वितम्|। मद् धृत्वा भगवान्छुक्रः सर्वदैत्येषु पूजितः। यद्धृत्वा पठनाद् बह्मन् बुद्धिमांश्च बृहस्पतिः।। पठनाद्धारणाद्वाग्मी कवीन्द्रो वाल्मिको मुनिः। स्वायंभुवो मनुष्चैव यद्धृत्वा सर्वपूजितः|| कणादो गौतमः कणवः पाणिनिः शाकटायनः| ग्रन्थं चकार च यद्धृत्वा दक्ष: कात्यायनः स्वयं | धृत्वा वेदविभागं च पुराणान्यखिलानि च। चकार लीलामात्रेण कृष्णद्वैपायन: स्वयम्।। शातातपश्च संवर्तोवसिष्ठश्च पराशरः। यद्धृत्वा पठनाद्ग्रन्थं याज्ञवल्क्यश्चकार सः।। ऋष्यश्रृंगो भरद्वाजश्चास्तिको देवलस्तथा। जैगीषव्यो ययातिश्च धृत्वा सर्वत्र पूजिताः।। कवचस्यास्य विपेन्द्र ऋषिरेव प्रजापतिः। स्वयं छन्दश्च बृहती देवता शारदाम्बिका।।
सर्वतत्त्वपरिज्ञानसर्वार्थसाधनेषु च। कवितासु च सर्वासु विनियोग: प्रकीर्तितः।। श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा शिरो मे पातु सर्वतः। श्रीं वाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदावतु।। ऊँ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रे पातु निरन्तरम्। ऊँ श्रीं ह्रीं भगवत्यै सरस्वत्यै स्वाहा नेत्रयुग्मं सदावतु।। ऐं ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा नासां मे सर्वदावतु। ह्लीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा चोष्ठं सदावतु।। ऊँ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहेति दन्तपंक्तिम् सदावतु। ऐमित्येकाक्षरो मन्त्रो मम कण्ठं सदावतु।। ऊँ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवां स्कन्धौ मे श्रीं सदावतु। ऊँ ह्रीं विद्याधिस्वरूपायै स्वाहा मे पातु नाभिकाम्। ऊँ ह्रीं क्लीं वाण्यै स्वाहेति मम हस्तौ सदावतु।। ऊँ सर्ववर्णात्मिकायै (स्वाहा) पादयुग्मं सदावतु। ऊँ वागधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा सर्वं सदावतु।। ऊँ सर्वकण्ठवासिन्यै स्वाहा प्राच्यां सदावतु। ऊँ सर्वजिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहाग्निदिशि रक्षतु।।
ऊँ ऐं ह्रीं श्रीं क्लींसरस्वत्यै बुधजनन्यै स्वाहा। सततं मन्त्रराजोऽ यं दक्षिणे मां सदावतु।। ऐं ह्रीं श्रीं त्र्यक्षरो मन्त्रो नैर्ऋत्यां सर्वदावतु। ऊँ ऐं जिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहा मां वारुणेऽ वतु।। ऊँ सर्वाम्बिकायै स्वाहा वायव्ये मां सदावतु। ऊँ ऐं श्रीं क्लीं गद्यवासिन्यै स्वाहा मामुत्तरेऽ वतु।। ऊँ ऐं सर्वशास्त्रवासिन्यै स्वाहैशान्यां सदावतु। ऊँ ह्रीं सर्वपूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदावतु।। ऊँ ह्रीं पुस्तकवासिन्यै स्वाहाधो मां सदावतु। ऊँ ग्रन्थबीजस्वरूपायै स्वाहा मां सर्वतोऽ वतु।। इति ते कथितं विप्र ब्रह्ममन्त्रौघविग्रहम्। इदं विश्वजयं नाम कवच ब्रह्मरूपकम्।। पुरा श्रुतं धर्मवक्त्रात्पर्वते गन्धमादने। तव स्नेहान्मयाख्यातं प्रवक्तव्यं न कस्यचित्।। गुरुमभ्यर्च्य विधिवद्वस्त्रालंकारचन्दनैः। प्रणम्य दण्डवद्भूमौ कवचं धारयेत्सुधीः।। पञ्चलक्षजपेनैव सिद्धं तु कवचं भवेत्। यदि स्यात्सिद्धकवचो बृहस्पतिसमो भवेत्।। महावाग्मी कवीन्द्रश्च त्रैलोक्यविजयी भवेत्। शक्नोति सर्वं जेतुं च कवचस्य प्रसादतः। इदं च कण्वशाखोक्तं कवचम् कथितं मुने। स्तोत्रम् पूजाविधनं च ध्यानं च वन्दनं श्रुणु।।

बघाट का ऐतिहासिक स्वरूप और जनजीवन

सोलन क्षेत्रीय पारम्परिक आध्यात्मिक जीवन और रीति -रिवाज़ इसकी खास पहचान हैं। यहाँ के जीवन की विविधता और एकता का सौंदर्य और सामंजस्य अनुकरणीय है। लगता है यहाँ के निवासियों के तार राष्ट्र और ब्रह्माण्ड से निरन्तर जुड़े रहते हैं। इसी प्रकार के कुछ अनुभव इस प्रथम भाग में दर्शाए जा रहे हैं।

बघाट का ऐतिहासिक स्तर

बिलासपुर से देहरादून तक के क्षेत्र को कुनिंद जनपद कहा गया है। महाभारत के युद्ध में इस जनपद ने पाण्डवों का साथ दिया था। प्राचीन बघाट रियासत और इसके आस - पास की रियासतों में मावी नामक कबीलों का अधिकार था। दक्षिण दिशा से आए राजपरिवारों ने इन कबीलों पर अधिकार करके अपनी ठकुराइयां स्थापित की थीं। लगभग ग्यारहवीं सदी में बिलासपुर के राजा वीर सिंह ने इन ठकुराइयों को जीता पर कुछ समय बाद ये क्षेत्र फिर से आज़ाद हो गए। सन् 1903 से सन् 1915 तक गोरखों ने इस क्षेत्र को कांगड़ा तक रौंदा। सपाटू और मलौण के किले से युद्ध का संचालक गोरखा नेता उसी किले में अंग्रेज सेनानायक अख्तर लूनी के हाथों परास्त हो गया। अंग्रेजों ने अपना साथ देने वाले स्थानीय मुखियाओं को पुरस्कृत किया तथा साथ न देने वाले मुखियाओं के क्षेत्र उनसे छीन लिये।

बघाट को घाटों की रियासत माना जाता है। बघाट शब्द की उत्पत्ति संभवत: बारह घाट की अपेक्षा बहुघाट से हुई लगती है। वैसे भी इसमें घाटों की संख्या बारह से अधिक है। इसकी स्थापना धारा नगरी से आए पाल राजा विजयदेव ने की थी। राजा बसंतपाल ने यहाँ के स्थानीय मावी कबीले के शासकों को हराकर जौणाजी में रियासत की नींव रखी। इन्हीं के वंशज इंद्रपाल ने बसाल, टकसाल और गढ़ को जीतकर रियासत को बघाट नाम दिया। देहूँघाट, लावीघाट, ओच्छघाट, चम्बाघाट, कण्डाघाट और गुग्गाघाट के साथ - साथ ड्यारशघाट यहाँ के प्रसिद्ध घाटों में से हैं।

लगभग ग्यारहवीं शती में बिलासपुर के संस्थापक राजा वीर सिंह ने जिन ठकुराइयों को जीता था उनमें से बघाट भी एक था। अंग्रेज - गोरखा युद्ध में गोरखों का साथ देने वाले राणा महेन्द्र सिंह से अंग्रेजों ने बघाट का अधिकतर भाग छीन लिया तथा कण्डाघाट और कसौली आदि क्षेत्र महाराजा पटियाला को बेच दिए। महाराजा पटियाला ने कसौली और सपाटू क्षेत्र लार्ड हार्डिंग को उपहार में दे दिए। कुछ समय बाद डगशाई भी भेंट कर दिया।

बघाट की पहली राजधानी जौणाजी में थी। धारा से लाई गई कुलदेवी की मूर्ति वहाँ दर्शनीय है। जाबली के पास कोटी में रहते हुए राज दरबार के दो आदमी एक ही नाम के थे, कालू पण्डित और कालू चमार। एक बार शासक ने भूलवश कालू पंडित से पूछा कि क्याब वह जूतों की जोड़ी बनाकर लाया है। कालू पंडित ने इसे अपना घोर अपमान समझकर आत्मदाह कर लिया। कालू पण्डित की याद में आज भी जाबली में कालू दादू का मन्दिर विराजमान है जहाँ आश्विन के पहले नवरात्र को मेला लगता है।

सन् 1901 में बघाट का कुल क्षेत्रफल 36 वर्ग मील आंका गया था। इसकी सीमाएं लगभग कण्डाघाट से जाबली और गौड़ा से सपाटू तक रही हैं। सोलन को स्थानीय बोली में सोलनी कहते हैं जो कि शूलिनी का विकृत रूप है। सन् 1903 के लगभग यह बघाट की राजधानी बनी। ज्योतिषी के कथनानुसार राजा दुर्गा सिंह को उनके जन्म के बाद

पिता से दूर बोहच नामक स्थान पर रखा गया। सन् 1928 में दुर्गा सिंह को राजा की उपाधि प्राप्त हुई। सन् 1962 में हुए अग्निकांड में राजमहल नष्ट हो गया जो कि नृसिंह मन्दिर के समीप था।

सोलन का सौंदर्य और जलवायु हर आगन्तुक के मन को मोह लेता है। लगभग 1864 में यहाँ सैनिक छावनी का निर्माण हुआ था। स्वतन्त्रता के बाद इसी छावनी क्षेत्र में पंजाब यूनिवर्सिटी को लाहौर से बदलकर बसाया गया था। सन् 1840 में कालका -शिमला सड़क का निर्माण आरम्भ हुआ था। बघाट का प्रथम नामकरण राजा इन्द्रपाल के समय में हुआ था। राजा दलेल सिंह ने बघाट को रियासत बिलासपुर की अधीनता से मुक्त किया था। अंग्रेजों ने गोरखों को भगाने के बाद बघाट से उसके आठ परगने छीन लिए थे।

कुछ दर्शनीय स्थान

कुंदला : यहाँ सोलन से 8 किलोमीटर दूर ऊँचाई पर स्थित प्राचीन शिव मंदिर है। इसके लिए यहाँ के ग्रामीणों ने भूमि दान में दी है। इस गाँव में प्राचीन वैद्यक परम्परा रही है। यहाँ पत्थर का बना नादिया बैल दर्शनीय है। साथ में छोटा सा भगवती मन्दिर भी सुन्दर है। हर साल दिवाली के चार दिन बाद यहाँ मेला लगता है। इसके मुख्य आकर्षण खेल, तीर - कमान और करयाला होते हैं। इसी वर्ष यहाँ सौ यजमानों ने 50 विद्वानों से 23 दिनों तक हरिहरात्मक यज्ञ संपन्न करवाया। इसके 23 कुण्डों में अतिरुद्र और अतिविष्णु यज्ञ के साथ -साथ गायत्री जप, महामृत्युंजय जप और चंडी पाठ करवाए गए। इनका मुख्य खर्च श्रद्धालुओं ने किया तथा यह यज्ञ रात- दिन चलता रहा जिसमें प्रतिदिन एक टन देसी घी सहित एक क्विंटल तिल लगते थे। इससे पहले यह यज्ञ सन् 1946 में बनारस में करवाया गया था। यज्ञ की सबसे बड़ी विशेषता स्कंदपुराण के 81000 श्लोकों पर व्याख्यान रहा। हमारे पुराण कथाओं के माध्यम से वैदिक आध्यात्मिक नियमों के पालन की प्रेरणा देते हैं। इस प्रकार के यज्ञ समाज में शांति, प्रेम और सौहार्द का रस बहाते हैं। वेदों के जीवनोपयोगी नियम क्रमशः पुराणों, रामायण और महाभारत के माध्यम से प्रकट हुए हैं।

मन्दिर का प्राचीन शिवलिंग वस्तुततः है ही हरिहरात्मक। हरि अर्थात् विष्णु और हर अर्थात् शिव। शास्त्रों में कहा है - शिवस्य परमो विष्णु: विष्णोश्च परम: शिव:। एक एव द्विधा भूतो लोके चरति नित्यश:।। अर्थात् एक ही शिवलिंग संसार में शिव और विष्णु दो रूपों में विद्यमान हैं। मन्दिर का सम्पूर्ण स्थल सृष्टि और चेतना की एकता के दर्शन करवाता है। यहाँ का अणु- अणु यज्ञमय नजर आता है। कुंदला को बघाट का तीर्थ कहें तो अतिशयोक्ति न होगी।

महेश्वर अलिंग हैं। प्रकृति प्रधान होकर वे लिंग हैं। महेश्वर निर्गुण हैं। प्रकृति या लिंग सगुण है। लिंग के विस्तार से विश्व की रचना होती है। सारा ब्रह्माण्ड लिंग के समान बना है। ब्रह्माण्ड रूपी ज्योतिर्लिंग असंख्य हैं। सारी सृष्टि लिंग के अंतर्गत है। सृष्टि लिंग से उत्पन्न और विकसित होकर उसी में लीन हो जाती है।

फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को चंद्रमा सूर्य के समीप होते हैं। इस रात्रि को व्रत करने से जीव रूपी चंद्रमा का सूर्य रूपी परमात्मा से मिलन अर्थात् विवाह होता है। यही शक्ति और शिव का समष्टिगत विवाह है। विवाह का लोकिक प्रयोजन भी जीवात्मा का परमात्मा से स्थायी योग करवाना ही है। यही अति हरिहरात्मक यज्ञ अथवा शक्ति और शक्तिमान के बीच की अभेदत्व स्थापना है।

भगवान् शिव करुणा के अवतार हैं। ये जल, दूध, चंदन, बिल्वपत्र और घोटा से प्रसन्न होते हैं। हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाते हैं। जंगम बाबा भी इन्हीं के आध्यात्मिक विवाह की गाथा गाते हैं। सोलन के निकट के क्षेत्रों में

जटोली, सलोगड़ा, रबौण, बसाल और कायलर आदि स्थानों पर दर्शनीय शिवालय बने हैं। इसके अतिरिक्त सिरिनगर, कसौली, पट्टे का मोड़, कुम्हारहट्टी, सूक्की जोहड़ी, नाहरी और त्रिशूलमहादेव भी प्रसिद्ध शिव मन्दिर हैं।

जटोली :यह स्थान सोलन से राजगढ़ की ओर जाने वाली सड़क पर सोलन से सात किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहाँ का शिव मन्दिर चूने के पत्थर की एक चट्टान पर बना है। सन् 1960 में महात्मा कृष्णानंद की तपस्या से यहाँ एक जलस्त्रोत निकल आया था। उस जल को औषधीय माना जाता है। यहाँ के जेठे रविवार को भण्डारे की परम्परा है। मन्दिर का विकास व सौंदर्य दर्शनीय है|

बोहच : सोलन से सपाटू रोड पर आठ किलोमीटर दूर इस स्थान पर राजधानी की नींव राजा हरिचंद पाल ने रखी थी। बघाट के लार्ड डलहौजी की लैप्स नीति के अन्तर्गत ब्रिटिश राज्य के अधीन चले जाने पर भी बाद में यह रियासत वापिस हो गयी थी। बघाट के अंतिम शासक राजा दुर्गा सिंह थे। बोहच में दिवाली के पन्द्रह दिन बाद पूर्णिमा को जिला स्तरीय मेला लगता है। यहाँ राजा के समय का एक खण्डित भवन भी है। मेले का आरम्भ माँ दुर्गा और बीजेश्वर की पूजा और ठोडा नृत्य से होता है। ठोडा नृत्य टांगों पर ऊन की पट्टी बांधकर उन पर निशाना लगाने वाले की विजय मानी जाती है। इस नृत्य से दर्शकों में महाभारतकालीन वीर रस की भावना का संचार होने लगता है। लेखक के दादा स्व 0 पं0 श्री शोभा राम शर्मा भी ठोडा के खिलाड़ी थे जिनकी पोशाक को हमें घर पर देखने का मौका मिला था। मेले में करयाला होता है परन्तु इसमें आज आधुनिक आतंकादि समस्याओं पर व्यंग्य जोड़ना जरूरी हो गया है।

करोल : सोलन के पास करोल की चोटी एक शिवलिंग के समान है। बर्फ और वर्षा के काल में इसकी शोभा एक जलहरी की तरह होती है। इसके अन्दर महाभारत कालीन लम्बी पहाड़ी गुफा है। इस चोटी के तले में स्थित चारों ओर के गाँव पानी की उपलब्धता के कारण उपजाऊ और समृद्ध हैं। चोटी की ऊँचाई समुद्र तल से 4000 फूट है। पहाड़ी के दक्षिणी भाग में खनिज जल पाया जाता है| गुफा के पास एक मन्दिर है। सोलन के मेले से आठ दिन पूर्व यहाँ करोल का इतवार (मेला) मनाया जाता है। गुफा के दूसरे छोर पर पिंजोर (पांडव निवास स्थान) माना जाता है। गुफा के अन्दर 60-70 फुट तक का स्थान पक्का बना है। गुफा का कलात्मक रूप देखते ही बनता है। करोल के साथ लगते गाँवों में भैंसों को रात-दिन खुला छोड़कर चुगाने का रिवाज़ है। चुगने के स्थान को बेश्क कहते हैं जहाँ उनके पानी पीने और नहाने के लिए प्राकृतिक तालाब बने हैं।

जौणाजी : यह स्थान सोलन से शिल्ली गाँव होकर 20 किलोमीटर दूर है। यहाँ प्राचीन विष्णु और शिव के मन्दिर हैं। यहाँ जन्माष्टमी का मेला लगता है। यहाँ पर विविध वर्णों (व्यवसायों) के लोग आपसी सद्भाव से जीवन बिताते हैं। यहाँ प्राचीन काल में एक किला होता था। यहाँ भी करोल की तरह बेश्क की व्यवस्था है। गाँव की ऊँची धार पर भगवती का मन्दिर है। समीप के जंगल में लगभग तेरह गाँवों के लोग अपने पशु चराते हैं। मन्दिर में हर साल दुर्गाष्टमी का मेला लगता है। यह क्षेत्र पानी वाला और उपजाऊ है। कहते हैं यहाँ का विष्णु मन्दिर औरंगजेब कालीन है।

बघाट पहले और अब : पुराने बघाट में अगर राजनैतिक स्थिति देखें तो आदर्श थी। राजा दुर्गा सिंह को इस बात के लिए सदा याद किया जाता रहेगा कि वे वैदिक विचारधारा के एक आदर्श पोषक थे। वे न केवल कर्मकांडी ,

अध्यात्मवादी और प्रजा प्रेमी थे बल्कि एक अच्छे इन्सान भी थे। अपनी भलाई के साथ-साथ सबकी भलाई के काम को प्राथमिकता देते थे। यही गुण उनको अन्य राजाओं से ऊपर उठाता है। उनकी शासन शैली पर आज भी लोग गर्व करते हैं। उस समय आधुनिक शिक्षा की व्यवस्था वे कुछ गिने चुने लोगों के लिए ही उपलब्ध करवा सके परन्तु संस्कृत भाषा की शिक्षा सबके लिए सुलभ थी।

बघाट को आर्थिक रूप से दो भागों में बांट सकते हैं। पहला सिंचाई योग्य क्षेत्र और दूसरा कम सिंचाई वाला शुष्क क्षेत्र। पहले प्रकार के क्षेत्रों में फल और सब्जियां पैदा होते थे और दूसरे भाग वाले क्षेत्र में मक्की , गेहूँ और चना आदि विविध अनाज पैदा होते थे। उस समय के किसान बहुत परिश्रमी और मिलनसार होते थे। सिक्के कमाने का साधन समिधा और टमाटर बेचना था। ग्रामीण परिवारों में एक दूसरे का ब्वारा या सहयोग करने का रिवाज़ था। ऐसे समयों पर वे इकट्ठे होकर हँसने - खेलने और विचार करने का मौका नहीं चूकते थे। दस -दस किलोमीटर दूर सोलन या सपाटू में 40- 50 किलो का वज़न आराम से पहुँचाते थे। पसीना बहाने से बीमार कम पड़ते थे परन्तु कभी - कभी शरीर के साथ ज्यादती से गम्भीर बीमार पड़ जाते थे। संयुक्त परिवारों में रहकर एक - दूसरे का दुःख - दर्द समझते थे। खेतों की ओर काम करने के लिए कतारों में निकलते थे और चुटकियों में काम हल होता था।

आज किसानों में वह पुरानी हँसी - खुशी कहाँ? अनेक चूल्हों में बंटकर समस्याओं, तनावों और रोगों का सामना करते हैं। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। फिर सभी के वश की किसानी है भी नहीं। पुराने ढर्रे पर तो बिल्कूल नहीं। कृषि विज्ञान की पढ़ाई की ओर झुकाव कम होने से पुराना ढर्रा यहाँ से जा भी नहीं रहा। पहले शुष्क क्षेत्रों में भी अनाज और दालें भरपूर वर्षा से खूब पैदा होते थे। अब वर्षा और सिंचाई के अभाव में सर्वत्र पैदावार घट गई है। यह बात अलग है कि हर व्यक्ति ने अपने योग्य सरल काम खोजकर उसे आय का साधन बना लिया है। सुख -समृद्धि का भी विभाजन हो गया है। जीवन में प्रतियोगिता आ गई है सहयोगिता की जगह। फल सभी लोग बढ़-चढ़ कर चाहते हैं परन्तु कम परिश्रम के साथ। अधिकाधिक फल पाने के लिए अनेक लोक जीवन तक को दांव पर लगा देते हैं। इस प्रकार की प्रतियोगिता स्वस्थ नहीं हो सकती।

क्षेत्रीय खेती कुदरत पर निर्भर है। परम्परानुसार माना जाता है कि जेठ के महीने में मृगशिरा नक्षत्र के सूर्य में यदि खूब तपन और आषाढ़ के आर्द्र और पुनर्वसु नक्षत्रों में खूब वर्षा हो तो फसलें बहुत अच्छी होती हैं।

धर्म के प्रसंग में कहें तो बघाट अग्रणी रहा है। यह क्षेत्र वैदिक विचारधारा को अच्छी तरह से आत्मसात किए हुए है। वैदिक विचारधारा तंगदिली से सर्वथा मुक्त रही है। यह एक बहुत उदारवादी विचारधारा रही है। इस विचारधारा को मिटाने के लिए विरोधी विचारकों ने न जाने क्या - क्या हथकण्डे अपनाए परन्तु सब व्यर्थ। कहते हैं सोने पर जितना हथौड़ा बजाओ वह उतना ही चमकता है। यही बात हमारी वैदिक विचारधारा की रही है। इस पर जितने भी आक्रमण हुए यह उतनी ही उजली होती गई। 'सारी दुनिया का भला हो' की सोच के सामने "केवल मेरा भला हो" की सोच को सदा घुटने टेकने पड़े हैं। अगर बघाट की शासन परम्परा में यह गुण न रहा होता तो बघाट के पास अपनी संस्कृति के नाम पर कोई चिन्ह शेष न होता। इसी जमीनी गुण के कारण आज भी हम अपने पुरखों पर गर्व कर सकते हैं।

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

सोलन : पुराणों के अनुसार मानवता के विरोधी असुरों के संहार के लिए भगवती दुर्गा का प्रादुर्भाव हुआ था। समस्त देवताओं ने उन्हें विविध हथियार उपहार में दिए। भगवान् शंकर ने त्रिशूल (शूल) दिया। इसी कारण वे शूलिनी कहलाई। इन्हीं शूलिनी माता की मूर्तिवश यहाँ का नाम सोलन पड़ा। ये भक्तों के आध्यात्मिक, आधिभौतिक तीनों प्रकार के शूलों या दुःखों का नाश करती हैं। देवी भागवत पुराण में दुर्गा माता का एक नाम शूलिनी भी बताया गया है। शूलिनी देवी की छः अन्य बहनें हिंगलाज, ज्वाला जी, लगासनी, नैना, नाउगी और तारा गिनाई गई हैं। तारा माता वही हैं जो तारा देवी (जिला शिमला) के नाम से विख्यात हैं।

शूलिनी बघाट राजवंश की कूल देवी मानी जाती है। विक्रमी आषाढ़ मास के दूसरे इतवार को इस देवी का मेला लगता है। सौ साल पहले शूलिनी देवी मन्दिर से थोड़ी दूर खेतों में दुर्गा माता की एक पिण्डी पाई गई थी। वहाँ भी एक मन्दिर बना है जो आज के गंज बाजार में स्थित है। मेले के दौरान शूलिनी माता अपनी बहन दुर्गा माता (गंज बाजार में) के यहाँ तीन दिन की मेहमानी करती हैं। आतिथ्य हेतु यह यात्रा एक सजी पालकी में खूब भक्तिपूर्ण वातावरण में होती है। शहर भर में जगह - जगह भण्डारे दिए जाते हैं। मेले का आरम्भ ठोडा नृत्य से होता है। इस नृत्य स्थल को आजकल ठोडो ग्राउंड कहते हैं। इसमें साल भर खेल और सांस्कृतिक कार्यक्रम चलते हैं। ठोडा नृत्य हमारी महान सांस्कृतिक विरासत का प्रतीक है। अन्याय के खिलाफ युद्ध भी हमारी एक सांस्कृतिक विरासत है परन्तु महापुरुष या भगवान् के अवतार द्वारा विश्वहिताय संचालित। सोलन का जलवायु अमूल्य और अनन्य है। यहाँ की शिक्षा व्यवस्था और सर्वांगीण प्रबन्धन अनुकरणीय बनता जा रहा है। सांस्कृतिक मूल्यों का विकास भी अनुकरणीय है।

सपाटू : यहाँ का गुग्गापीर स्मारक दर्शनीय है। सुना जाता है कि गुग्गापीर और शिरगुल आदि वीर मुगलों के साथ संघर्ष के समय पहाड़ी स्थानों की ओर आते रहे। यह स्थान सोलन से 20 किलोमीटर दूर अर्की की ओर जाने वाली सड़क पर स्थित है। जन्माष्टमी के 5 दिन बाद भाद्रपद सप्तमी को यहाँ मेला लगता है। गुग्गामाड़ी का मन्दिर बनाने के लिए स्थान चुनने हेतु एक बकरे के गले में लाल डोर बांधकर उसे खुला छोड़ा गया था, जहाँ वह बैठा था उसी स्थान पर मन्दिर बनाया गया था। अगस्त के महीने में गुग्गा के भक्त रंग बिरंगे कपड़ों से सजे झण्डे, डमरू और सारंगी बजाते तथा भजन गाते हुए घूमते हैं। रक्षा बन्धन के दिन तक गुग्गा चौहान की याद में त्रिशूल, छड़ियों और नाग की प्रतिमाओं के साथ गुग्गे के गीत (गाथाएं) गाए जाते हैं।

कहते हैं मारवाड़ (राजस्थान) में दो बहनें गाछल और बाछल निःसंतान थीं। बाछल ने संतान पाने के लिए गुरु गोरखनाथ से प्रार्थना की। गोरखनाथ ने एक विशेष वनस्पति की जड़ें देकर पत्थर पर घिसकर लेने को कहा। औषधि लेने पर बाछल के गुग्गा चौहान तथा अन्य तीन सहेलियों से नरसिंह, भजनू और रत्नू पैदा हुए। घिसा चूर्ण बाछल की घोड़ी भी खा गई जिस कारण उससे एक नीला घोड़ा पैदा हुआ।

गुग्गा के अन्दर जन्म से ही चमत्कारी शक्तियाँ पाई गई। उसका अपने मौसेरे भाईयों से युद्ध हुआ। इंद्रराज से वह कई घंटों तक बिना सिर के ही लड़ता रहा। हिमाचल प्रदेश में गुग्गा को पशुधन का रक्षक और सर्पविष का निवारक माना जाता है। तांत्रिक उपायों से सर्पदंश का इलाज करने वालों को गारडू कहा जाता है। नई फसल सर्वप्रथम गुग्गा को भेंट की जाती है। गुग्गा मेला के मौके पर करयाले का आयोजन भी होता है। गुग्गा की गाथा धर्मनिरपेक्षता की

प्रतीक है। छड़ी के नीचे नारियल तथा ऊपर ताजिया होता है। गुग्गा गरीबों के मसीहा हैं। मन्दिर में केवल बताशे चढ़ाए जाते हैं। यह मेला गोरखा ट्रेनिंग सेंटर के खुले मैदान में संपन्न होता है।

कुछ अन्य प्रसिद्ध स्थान

सुल्तानपुर : सुल्तानपुर कुम्हारहट्टी से 10 किलोमीटर दूर है। यहाँ का पुराना जेलखाना प्रसिद्ध है। यह गाँव प्राचीन आयुर्वेदिक सेवाओं के लिए भी विख्यात रहा है। सोलन शहर के चारों ओर चार आयुर्वेदिक घाटियां (गाँव) रहे हैं। पूर्व में खनोग, पश्चिम में बोहच, उत्तर में करोल और दक्षिण में बड़ोग। खनोग घाटी के वैद्य कुंदला गाँव में, बोहच घाटी के वैद्य घट्टी में, करोल के वैद्य पाटी चबेर में रहते थे। ये वैद्य जड़ी -बूटियों से इलाज करते थे परन्तु परहेज करवाकर। पाटी चबेर में मनी राम और घट्टी में दुर्गा नंद प्रसिद्ध वैद्य थे। उपरोक्त चारों वैलियां और गाँव सुंदर और आकर्षक हैं। स्व 0 सांसद श्री कृष्णदत्त इसी गांव के रहने वाले थे जिस कारण उन्हें सुल्तानपुरी के नाम से जाना जाता था।

धारों की धार : यह स्थान ऊँचे टिब्बे पर बसा हैं एवं अति सुंदर है। यहां अखरोट के पेड़ बहुतायत में पाए जाते हैं। यहाँ अनेक प्रकार के जंगली पशु-पक्षी दर्शनीय हैं। यहाँ का पुराना पत्थर का किला तीन सौ साल पहले गोरखों ने बनाया था।

खनोग : खनोग गांव में माता हाटकोटी का मंदिर है। इसी गांव के साथ के गांव मतिउल में बीजट का मन्दिर है। इसमें छमाही पूजा होती है। यहाँ विवाह के बाद सेहरा चढ़ाए जाने का रिवाज है। बरसात में साजी को यहाँ नमाला (देवता की खेल) किया जाता है। अदृश्य बाधा के निवारण का उपाय पूछा जाता है। इसका मूल स्थान सरैन (चूड़धार) गाँव में माना जाता है। इसे इन्द्र का अवतार माना जाता है।

आंजी गांव : सोलन - राजगढ़ सड़क पर स्थित यह गांव सोलन शहर से 6 किलोमीटर दूर है। यहाँ के शिव मन्दिर में शिवरात्रि और जन्माष्टमी को यज्ञ का आयोजन होता है। यहाँ पर धर्मशाला भी बनी है। पहले कभी एक तपस्वी महापुरुष अपनी योगशक्ति से इस गाँव को पानी लाए थे। यहाँ भाट देवता के नाम से पूजा होती है।

ओच्छघाट : इस गांव में माँ ज्वालाजी के नाम से मेला लगता है। निःसन्तान मोती राम नाम के एक पुलिसमैन के घर ज्वाला जी की कृपा से सन्तान होने पर उसने यहाँ पर माँ ज्वाला जी का मन्दिर बनवाया था। यहाँ सारसाजी को मेला लगता है।

धर्मपुर : धर्मपुर की एक पहाड़ी की चोटी पर माँ मनसा देवी का मन्दिर है। उस समय बघाट की राजधानी कोटी (जाबली) होती थी। उस दौरान इस मन्दिर का निर्माण हुआ था। नवरात्रों में शाक्त राजा दिलीप दिग्विजय हेतु यहाँ शक्ति की उपासना करते थे। धार्मिक आयोजनों के कारण यहाँ का नाम धर्मपुर पड़ा। चैत्र शु० नवमी को स्थापना दिवस पर यहाँ मेला लगता है। इस मन्दिर में नारियल भेंट करने की परम्परा है परन्तु देश में शान्तिकाल पर ही। बाद में भैरव दर्शन किए जाते हैं। मनसा सती माता के मन से पैदा हुई थी।

चायल : चायल प्रकृति की सुरम्य स्थली है। इसे राजा पटियाला ने बसाया था। कहते हैं कि निर्माण के समय राजा बाधाओं से ग्रस्त होकर स्थानीय महात्मा की शरण में गया तो महात्मा के आशीर्वाद से निर्माण सफल होता गया। यहाँ जेठ महीने के आखिरी रविवार को उसी महात्मा या सिद्ध बाबा की स्मृति- पूजा पूर्वक मेला लगता है।

ड्यारशघाट : ड्यारशघाट गाँव को ग्राम पंचायत चामत भढेच की सांस्कृतिक राजधानी कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। पंचायत भवन यहाँ से एक किलोमीटर दूर है। यहाँ से देवठी चार किलोमीटर दूर है। यहाँ नर्मदेश्वर महादेव, बीजेश्वर महादेव, ड्यारश महादेव और नगरकोटी देवी के मन्दिर दर्शनीय हैं। नर्मदेश्वर महादेव के विशाल भवन में संगीत सम्मेलन, कवि सम्मेलन, सामुहिक यज्ञोपवीत संस्कार और अन्य पूजानुष्ठान तथा यज्ञादि समय - समय पर सम्पन्न होते रहते हैं। 2- 6- 2011 को यहाँ शतचंडी महायज्ञ संपन्न हुआ। इस घाट के पूर्व में करोल, पश्चिम में सपाटू, उत्तर में देलगी और दक्षिण में सोलन शहर शोभायमान हैं।

जटोली, पट्टे का मोड़, कोटला नाला, आंजी और कथोग आदि गांवों के शिव मंदिर दर्शनीय हैं। भगवती माँ के मन्दिर कलीन, पटराड़, शामती , आंजी और जाबली में भी स्थित हैं। विविध मन्दिरों की सूची यहां अप्रासंगिक होगी।

शील का धाला : ड्यारशघाट से दो किलोमीटर दूर यह गाँव कभी आयुर्वेदज्ञों का गढ़ था।

मथान : यह गांव देवठी से बशाड़ होकर लगभग 8 किलोमीटर दूर सोलन की बराबर की ऊँचाई पर बसा है। चढ़ाई में होने वाली थकान को यहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य मिटा देता है। यहाँ का पत्थर बहुत प्रसिद्ध है जिससे विविध चीजें बनती हैं। पक्के घर हैं। 2-3 मन्दिर हैं। कुछ अखरोट के पेड़ हैं। जमीन रसीली और हरियालीदार है। सड़क यहाँ के सोंदर्य को कलंकित कर सकती है। यहाँ की खेती संभवतः गोरखों पर निर्भर है। मजदूर गोरखों के बच्चे पढ़ाई में यहाँ के स्थानीय बच्चों की बराबरी कर रहे हैं।

जभेचा : जभेचा के लिए मथान से पश्चिम की ओर सड़क से नीचे उत्तरना पड़ता है। इस गाँव के ब्राह्मण अगस्त्य मुनि के वंशज माने जाते हैं। इनके कुलदेवता चूड़ेश्वर महादेव का मन्दिर ठीक गांव के बीच में शोभायमान है। पहले कभी इनका कुलेष्ट भी बीजेश्वर होता था। यहां का भूमिपति तो आज भी बीजेश्वर ही है। एक बार दुर्भाग्यवश गांव के ऊपर गांव की पहाड़ी गिर गई। गांव में केवल एक ही व्यक्ति जिंदा बच पाया था। उसने इसे बीजेश्वर देवता की अनदेखी मानकर मन्दिर में से बीजेश्वर की मूर्ति उठाकर खड्ड में फैंक दी और कहा कि तुमने मेरे साथ के लिए एक प्राणी को भी शेष न बचाया अतः तुम्हारी पूजा नहीं करूंगा। बाद में उस व्यक्ति ने काशी में जाकर पांडित्य प्राप्त किया था। कहते हैं उसके बाद वह अपने नानके (सिरमौर) से चूड़ेशवर महादेव की मूर्ति लाया परन्तु विशेष आग्रह पर सात्विक विधि से। अतः यहां पशुबलि वर्जित है। कहते हैं कि एक बार शिरगुल और गुग्गा तुर्कों की कैद में दिल्ली में रहे। वहां शिरगुल ने भंगायनी को बहन बनाकर उसकी सहायता से जेल के शरिए कटवाए थे। इस गांव के पूर्वजों के अनुसार बीजेश्वर ओर शिरगुल भाई - भाई थे। गांव वासी दोनों की पूजा करते हैं। इनके कुलरक्षक शिरगुल और बीजेश्वर हैं। ये लोग आध्यात्मिक परम्पराओं के धनी हैं।

जयन्ती मंगला काली भद्रकाली च शूलिनी। दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तुते।।

बघाट राज दुर्गा सिंह का प्रेरक जीवन

राजा दुर्गा सिंह वैदिक धर्म के महान् प्रेमी थे। इन्होंने ज्योतिषाचार्य पं0 मुकुन्दवल्लभ को राज्य में संरक्षण देकर मार्तण्ड पंचाग का संचालन करवाया। गणितीय दृष्टि से आज इस पंचांग का अपना एक विशिष्ट स्थान है। उज्जैन के राजा विक्रमादित्य दुर्गा सिंह के ही वंशज थे। श्री रामचंद्र, राजा भोज और हरिश्चंद्र भी इसी वंश की देन हैं। राणा से राजा कहलाने वाले दुर्गा सिंह बघाट के नवें शासक थे।

राजा दुर्गा सिंह अजात शत्रु थे। गौ-ब्राह्मण की सेवा में सदा लगे रहते थे। इनका वंश पर अर्थात् भौतिकता तथा मार अर्थात् नाशक होने के कारण परमार कहलाया। कस्तुत्त: ये अध्यात्मवादी जीवन जीते थे। इन्होंने अपने मन को जीता हुआ था। शोघी वाले सिद्ध बाबा सहित श्रेष्ठ विद्वानों और कवियों को अपने यहाँ आश्रय दिया। महामहोपाध्याय (तत्कालीन डा0) पं० मथुराप्रसाद दीक्षित को विधिवत् अपना गुरु बनाकर उन्हीं को राज्य की शिक्षा का पूरा कार्यभार सौंपा। उन्हें राजकीय संस्कृत महाविद्यालय सोलन का प्रथम प्राचार्य बनाया।

युवावस्था में ही बिना किसी संतान के ही इन्हें विधुर जीवन व्यतीत करना पड़ा। शेष जीवन विधवा की तरह परमात्मा को समर्पण कर दिया। अपने यहां आनंदमयी माँ का आश्रम बनाकर हर वीरवार को उनका कीर्तन करते थे। इन्होंने शुद्ध गणित के लिए मार्तण्डपंचांगकर्ता को पुरस्कृत भी किया। राजा के ही आश्रय में पंचांगकर्ता के सुपुत्र श्री सत्यव्रत ने भौतिकता से ऊपर उठकर अपने मुद्रण व्यवसाय की नींव रखी।

राजा के पूर्व पुरुषों का आगमन धारानगरी (राजस्थान) से हुआ था। ये अपने राज्य का खर्चा ब्रूरी की कंपनी से प्राप्त आय से चलाते थे। इनकी योग्यता, न्यायपरायणता, अच्छा अनुशासन और आमदनी से प्रभावित होकर अंग्रेजों ने इन्हें राजा या सीआईई की उपाधि से अलंकृत किया था। इनकी अच्छी सुरक्षा व्यवस्था में देश के उच्चस्तरीय लोग यहां आना पसंद करते थे। पानी, बिजली, रास्ते और बाजार का प्रबंध उत्तम था। इन्हीं के समय में नगरपालिका की स्थापना हुई। मेले में देश के प्रसिद्ध पहलवानों को बुलाया जाता था। बघाट के विविध मेलों में उद्घाटन के समय ठडैर अर्थात् नाचते व्यक्ति के पैर पर तीर का निशान साधा जाता था। अच्छे निशानेबाज को रुपयों और पगड़ी से सम्मानित किया जाता था। सोलन, सलोगड़ा, बोह्च और बसाल के पारम्परिक मेले आज तक यथावत् चले आ रहे हैं। ठोडे का खेल प्राचीन वीरता और धार्मिक परम्पराओं का प्रतीक है।

राजा दुर्गा सिंह अपराधी को निःसंकोच दण्ड देते थे। ये परमपद की प्राप्ति का पहला सोपान कर्मकाण्ड अथवा ब्रह्मकर्म को मानते थे। शंकाओं का शास्त्रीय समाधान बताते और करवाते थे। गरीबों की सहायता करते थे। अपराध के समर्थन को पाप मानते थे। अधीनस्थ न्यायालय के निर्णय का सम्मान करते हुए असमर्थ को क्षमा भी कर देते थे। अपने कार्यालयों को देवनागरी लिपि में काम करने की आज्ञा दी गई थी। ये केवल योग्य और प्रशिक्षित अध्यापकों को नियुक्त करते थे। संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य के सहायक पं0 चंद्रदत्त जोशी को इन्होंने उन्हें तत्काल मातृभक्तिपूर्ण श्लोक रचना के आधार पर नियुक्त किया था।

इनकी धर्मपरायणता के कारण सोलन को धर्मराज की नगरी कहा जाता था। कसोली में सस्वर चतुर्वेद मन्दिर की स्थापना इनके विशिष्ट कार्यों में से एक था। इन्हीं के काल में सोलन में गोस्वामी श्री गणेशदत्त ने सनातन धर्म सभा की स्थापना की। उस काल में सोलन में भारत के विख्यात विद्वान गोपीनाथ कविराज से श्राद्ध परंपरा पर व्याख्या भी करवाई थी। धर्मसंघ काशी द्वारा राजा को धर्ममार्तण्ड की उपाधि दी गई थी। ये भारत की स्वतंत्रता के लिए अपना राज्य देने को सदा तत्पर रहे। ये जिला शिमला की रियासतों के बोर्ड के अध्यक्ष थे। ये पर्वतीय संस्कृति को विशेषतः रक्षणीय मानते थे। इन्होंने पाकिस्तान द्वारा सताए गए शरणार्थियों को अपने यहाँ शरण प्रदान की। इन्हीं शरणागतों ने सोलन में मुसलमानों पर अत्याचार किए थे। रानी संताप को न सह पाई और संसार से विदा हो गई।

राजा ने रानी के अन्तिम संस्कार पूरी शास्त्रोक्त विधि से किए। उनके अधूरे व्रतों और उद्यापनों को पूरा किया। ये गुरु पूजा पूरे सोलह उपचारों से करते थे। इन्होंने अपने महल के जल जाने पर तथा ज्ञात होने पर भी दोषी के विरुद्ध कोई सजा नहीं होने दी। ये निष्पक्ष दृष्टि के धनी थे। पंडितों का स्वागत परम्परानुसार केसर तिलक और पुष्प माला से करते थे। राजाश्रित वैद्य पं0 श्री माधव के अनुसार भारत के गुलाम होने का कारण धर्म की गलत धारणा 'अहिंसापरमो धर्मः' थी। इस तरह राजा दुर्गा सिंह के शासन से हमें अनेक शुभ और उपयोगी प्रेरणाएं मिलती हैं।

गॉव-गाँव में पूजित काली माता

परमात्मशक्ति भगवती माँ निराकार होकर भी जीवों के दुख के निवारण हेतु हर युग में साकार अवतार लेती हैं। उनका शरीर धारण उनकी इच्छा का विकास है। यह सनातन शक्ति महामाया कहलाती हैं। सबके मनों को मोह लेती हैं। इनकी माया से मोहित ब्रह्मादि देवता भी परमात्मा को नहीं जान पाते। जगन्माता सत्त्व, रज और तम तीन गुणों के सहारे संसार की रचना, पालन और विलय करती हैं।

प्रलयकाल में जलमग्न भगवान् विष्ण शेष शैय्या पर योगनिद्रा में मग्न थे। उसी समय उनके कानों में मधु- केटभ नामक दो राक्षस पैदा हुए। उन दोनों ने विष्णु की नाभि से उत्पन्न हुए कमल के ऊपर विराजमान ब्रह्मा जी ने अपनी रक्षा हेतु परमात्मशक्ति से प्रार्थना की कि इन दोनों असुरों को मोहित करके मेरी रक्षा करो तथा विष्णु जी को जगा दो। ये फाल्गुन शुक्ल द्वादशी को त्रिलोकमोहिनी शक्ति के रूप में आकाश में प्रकट हुई तथा साथ में आकाशवाणी हुई कि मैं मधु-केटभ को मारकर तुम्हारा संकट दूर करूंगी। वे ब्रह्मा जी के सामने आकर खड़ी हो गई तथा विष्णु जी भी जाग गए। विष्णु जी ने पाँच हजार वर्षों तक दोनों से युद्ध किया। महामाया के मोह या अज्ञान के प्रभाव से दोनों असुर विष्णु के युद्ध से प्रसन्न होकर भ्रमवश उनसे वांछित वर मांगने को कहने लगे। विष्णु जी ने कहा कि अगर ऐसा है तो फिर मेरे ही हाथों अपने मरने का वरदान दो। असुर बोले कि स्वीकार है परन्तु केवल सूखी धरती पर। विष्णु जी ने तुरंत दोनों को अपनी जांघ पर रखकर सुदर्शन चक्र से काट डाला। माँ काली ने जिस प्रकार उन दोनों असरों की बुद्धियों को भ्रमित कर उनका अंत कर डाला उसी प्रकार गाँव -गाँव में पूजित माँ काली जीवों के संकटों को मिटाती हैं।

परंपरागत धार्मिक संस्कार

सोलन क्षेत्र में प्रचलित धार्मिक संस्कारों में से निम्न संस्कार प्रमुख हैं: - 1. पुंसवन संस्कार पुत्र प्राप्ति के लिए गर्भ रहने के दो महीने बाद शुभ मुहूर्त में गर्भिणी से करवाया जाता है| संभवतः आजकल इसकी जगह संतान गोपाल मंत्र के अनुष्ठान का प्रचलन है। अगर ईश्वरीय कृपा हो तो इसका सुफल मिलते अवश्य देखा गया है। कदाचित् कठोर प्रारब्ध ही बाधक बन सकता है अन्यथा फल शुभ और अनुकूल ही रहता है।

2. सीमन्तोन्यन संस्कार गर्भ के शोधनार्थ गर्भ रहने के बाद सातवें - आठवें महीने में करवाने की परम्परा है। आजकल संभवत: इसके वैकल्पिक रूप में गर्भ के सर्वविध कल्याणार्थ दुर्गा सप्तशती के पाठ करवाए जाते हैं।

3. नामकरण संस्कार बालक की तेजोवृद्धि के लिए प्रसव होने के बाद ग्यारहवें दिन करवाया जाता है। इसमें नामाधिष्ठात्री देवी का पूजन प्रधानतः होता है।

4. निष्क्रमण अर्थात् सूर्यदर्शन संस्कार भी नामकरण के साथ ही संपन्न हो जाता है।

5. अन्नप्राशन संस्कार में गर्भकाल में मलिनता भक्षणजन्य दोष की निवृत्ति हेतु करवाया जाता है। इसमें हवन, पूर्णाहुति और भावी आजीविका की वस्तु का स्पर्श करवाया जाता है।

6. कर्णवेध संस्कार में स्वर्णकार से बालक का दांयां और कन्या का बायां कान वेध करवाया जाता है। आजकल अधिकत्तर यह कन्याओं का ही होता है।

7. विवाह संस्कार में वर का वरण, कन्या के घर में द्वाराचार, वर पूजन, मधुपर्क, कन्यादान, दोनों पक्षों द्वारा गौदान, अग्निस्थापन, हवन, कन्या का अंगुष्ठ ग्रहण, चार अग्नि परिक्रमाएं, अश्मारोहण, सप्तपदी (प्रतिज्ञा), सिंदूर दान, सूर्य अथवा ध्रुवदर्शन और शाखा (गोत्र) आचार आदि कर्म करवाए जाते हैं।

8. व्यक्ति के अंतिम संस्कार अंत्येष्टि में गोबर से भूमि का उपलेपन, कुशा बिछाना, शव को उत्तर सिर रखना, मुख में तुलसी, पंचरत्न और गंगाजल डालना, शव का स्नान, श्वेतवस्त्र में लपेटना, जौ के आटे के स्थान - द्वार- चौराहा- शमशान और चिता पर पिंडदान, अस्थिचयन, वृक्ष के मूल (पीपलादि) में धर्मघटदान, मृत्यु के स्थान पर दीपक दान, दस दिन तक पिंडदान, ग्यारहवें दिन महाब्राह्मण को गोदान और बारहवें दिन शैय्यादान आदि कर्म करवाए जाते हैं।

महामहोपाध्याय पं0 मथुरा प्रसाद दीक्षित का प्रेरक गुरुत्व

पं0 मथुरा प्रसाद दीक्षित बघाटराज श्री दुर्गा सिंह के गुरु थे। इनके व्यक्तित्व का प्रभाव एक विशाल क्षेत्र तक फैला था। ये राष्ट्रवादी सांस्कृतिक चेतना के धनी थे। ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं पर आधारित इनकी संस्कृत रचनाओं में राष्ट्र के उद्धार हेतु तड़पन दिखाई देती है। इनके “भारत विजय नाटक” में अंग्रेजों और मुसलामनों की भारत को गुलाम रखने की मुहिम साफ दिखाई देती है। देश के कुछ राजाओं के स्वार्थों की चर्चा भी इनमें विस्तार से है। इनके अनुसार मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होती है। यह विचार भगवान् रामचंद्र से मिलता है। राष्ट्र सत्य पर टिकता है। छल-छद्म और धोखे पर नहीं। धर्म को राष्ट्र की नाभि (केन्द्र) कहा गया है। सत्य ही धर्म है।

राजगुरु पं० जी का जन्म सन् 1878 में उ 0 प्र 0 के हरदोई जिले के , बलवंत नगर में हुआ था। काशी विद्यापीठ से इन्होंने साहित्यचार्य की उपाधि प्राप्त ' की। स्वतंत्र अध्ययनपूर्वक ये कथावाचक और व्याख्याता बने। ये देवी भगवती माता के भक्त थे। असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण ये जेल भी गए थे। जेल से छूटने पर इन्होंने स्वतंत्रता अभियान में भाग लिया। संस्कृत नाटकों के माध्यम से अपने अभियान को गति प्रदान की। इनके विख्यात “भारत विजय नाटक” में गुलामी के दो सौ वर्षों का हाल चित्रित किया गया है। इसकी रचना सन् 193 8 में हुई थी। इसमें कल्पना की गई थी कि अंग्रेज अपनी गलती के लिए क्षमायाचना करके देश की सत्ता गाँधी जी को सौंपकर वापिस चले जाएंगे। इस काल्पनिक भविष्यवाणी के कारण इस नाटक को छापने पर प्रतिबंध लगाया गया था। यह प्रतिबंध आजादी के बाद ही हट सका था। “भ्रष्टाचार साम्राज्यम्” इनकी अप्रकाशित रचना मानी जाती है। महाराणा प्रताप और पृथ्वीराज चौहान के राष्ट्रप्रेम पर भी इनकी रचनाएं हैं। इनके वैदुष्य से संस्कृत ओर भारतीय संस्कृति की कोई ही शाखा बची होगी जिस पर इनकी लेखनी न उठी हो।

एक प्रेरक सुसंस्कृत जीवन

बघाट रियासत या सोलन क्षेत्र में संस्कृत भाषा के अध्ययन और अध्यापन की एक लम्बी और सुदृढ़ परम्परा रही है। इस प्रसंग में राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ नई दिल्ली के संस्थापक पं0 परमेश्वरानंद शास्त्री के प्रेरक संस्कृतमय जीवन का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा, विशेषकर नई पीढ़ी के संस्कृत अध्येताओं के लिए।

पं० जी शिक्षण का मतलब बुद्धि का परिष्करण अर्थात् शोधन मानते थे। सफलता का मूल पुरुषार्थ होता है। पुत्र प्राप्ति से वंश वृद्धि होती है परन्तु पुत्री का भी अपना विशिष्ट स्थान है। माँ (भगवती) के स्मरण से इन्होंने अपने कार्यों में सफलता अनुभव की थी। ब्रह्म या परमात्मा के आनंद की अनुभूति का आधार आत्मा है।

पं० जी ने तत्कालीन दूसरी काशी अर्थात् लाहौर में शिक्षा प्राप्त की थी। उस समय (आज भी) पंजाब विश्व विद्यालय की शास्त्री योग्यता सम्मानजनक मानी जाती थी। ये दण्ड को न्याय का प्रतीक मानते थे। पांडित्य का प्रमाण नीरस विषय को रसीला बनाने में है। आत्मप्रशंसा पाप है। उत्साह से सुख -संपदा आती है। मरने से मुक्ति नहीं होती, ज्ञान से होती है।

शास्त्री जी सदैव उपयोगी साहित्य की रचना में समय लगाते थे। अपने गुरु जी का सेवा-सम्मान करना न भूलते थे। विद्या से विनय (नम्रता) आती है जो कि जीवन सुख का मूल है। परमेश्वर सबसे बड़ा सहारा होता है। शरीर का धर्म चेतना से अलग होता है। सनातन धर्म नित्य नूतन रूप धारण करता रहता है, ठीक सोने से जेवरों की तरह। परमेश्वर विविध रूप धारण करके हमारा कल्याण करता रहता है। वेद, शास्त्र, ऋषि और आचार्यों के वचन प्रमाण होते हैं।

मेहनत से कभी भागना नहीं चाहिए। स्वाध्याय का मतलब है आत्मा की खोज करना। माँ भगवती गायत्री आदि की उपासना से वाणी में सत्य (सर्वजीवहित की सोच) उतरता है। सभी सफलताएं गुरु (गायत्री आदि के) की कृपा से संभव होती हैं। इससे पूर्णता या परमानंद का लाभ संभव है। आत्मप्रेमी को सदा दूसरों के हित में कुछ न कुछ करते रहना चाहिए।

वेदामृतवचनों की रचना विश्व के हितार्थ हुई है। इनके मतानुसार लेखन कर्म निष्कर्षात्मक (सारात्मक) होना चाहिए। पं० जी अपनी वाणी के कौशल से जनसाधारण का मन जीत लेते थे। किसी भी विवाद का निर्णय ये वैदिक सिद्धान्त के आधार पर करते थे।

शास्त्री जी के बाल्यकालीन धार्मिक संस्कार इनके अंदर वाणी तत्त्व की अभिव्यक्ति के लिए हुए थे। ये परमात्मा की इच्छा को सबसे बलवान मानते थे। इनकी शिक्षा के समय योग ही व्यायाम था। गायत्री मंत्र की दीक्षा वेदाचार्य से लेना श्रेष्ठ है। भगवती माँ की कृपा से कांटे भी फूल बन जाते हैं। माँ से बढ़कर कोई देवता नहीं है। कष्ट के समय में माँ भगवती के चरणों को याद करना चाहिए। ये अपने आचरण पर दृढ़ रहकर कहते थे कि यही मेरा धर्म है। वेद विद्या ब्राह्मण से अपनी रक्षा हेतु अपेक्षा करती है। ब्राह्मण को छः अंगों सहित वेदों का अध्ययन करना चाहिए। हमारे कुल (वंश) की वृद्धि केवल हमारे पुण्य कर्मों से ही संभव है। बालक में मेधा (बुद्धि) जनन हेतु धार्मिक संस्कारों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

पं० जी का लालन-पालन उपरोक्त पवित्र संस्कारों के साथ हुआ तथा स्वयं भी अपने परिवार तथा समाज को वही पवित्र संस्कार देते हुए अपना जीवन बिताया। उन्होंने दूसरों को भी एतदर्थ प्रेरित किया। वर्तमान संस्कृतज्ञ भी उसी

मार्ग को अपनाएं तो न केवल भारत का अपितु विश्व का भी कंल्याण होगा। पवित्र संस्कारों या अच्छे आचरण की जरूरत मानव मात्र को है, किसी देश या वर्ग विशेष को नहीं।

भ्रष्टाचार के सफाए की प्रेरणा

भ्रष्टाचार के नाशक भगवान् परशुराम का जन्म वैशाख शुक्ल तृतीया को त्रेत्ता और द्वापर की संधि में हुआ था। ये भगवान् विष्णु के अंशावतार थे। ये आज भी चिरंजीवी होकर महेन्द्र पर्वत पर तपस्यालीन हैं। किसी पुण्यात्मा को ही इनके दर्शन संभव हैं। ये ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों के गुणों से संपन्न होकर वरदान, दण्ड और शाप देने की शक्ति रखते थे। वेदविद्या और धनुर्विद्या पर इनका समान अधिकार था। स्त्री, गो, ब्राह्मण, निर्धन और दीन - दलितों की रक्षा करने से कभी न चूकते थे।

ये अपने पाँच भाईयों में सबसे छोटे थे। इन्होंने भगवान् शंकर को अपनी तपस्या से प्रसन्न करके महाविध्वंसक अस्त्रों सहित दिव्य परशु (कुल्हाड़ा) प्राप्त किया था।

कार्तवीर्यार्जुन ने दत्तात्रेय से सहस्त्रबाहु (अत्यंत बली) होने का वरदान पाया था। इस महाबल को वह पचा न सका और अभिमान के साथ उद्दण्डतापूर्वक शिकार खेलता हुआ जमदग्नि आश्रम में जा पहुँचा। जमदग्नि के यहाँ इंद्र से प्राप्त कामधेनु की कृपा से किए गए अपने सेना सहित भव्य सेवा सत्कार से दंग रहकर वह ललचा गया। वह अपने दरबार की शोभा के लिए उस दिव्य गाय को मांगने लगा। आध्यात्मिक जीव का महत्त्व भला भौतिकवादी (असुर) क्या समझे। दिव्यात्मा गौ का कष्ट ऋषि जमदग्नि को कैसे रास आता। याचना अस्वीकार कर दी। सहस्त्रबाहु ने अपने बाहुबल तथा सैन्य शक्ति से बछड़ी सहित गाय का अपहरण कर उन्हें महिष्मती पहुंचा दिया। भगवान् परशुराम पीछा करके महिष्मती में उस राजा को उसके आततायी साथियों सहित मौत के घाट उतार कर बछड़ी सहित कामधेनु को वापिस आश्रम में ले आए।

उसके बाद मृतक राजा के धार्मिक पुत्र जयध्वज का राज्याभिषेक किया गया। अन्य दुराचारी पुत्रों ने भागकर ऋषि जमदग्नि का सिर काट डाला। विधवा रेणुका ने संकट में इक्कीस बार छाती पीटकर पुत्र परशुराम को याद किया। परशुराम ने वहां पहुँचकर समाचार जाना तो आततायियों का इक्कीस बार सामना करने की ठानी।

दुराचारियों का सफाया करने के बाद तथा सुशासन की स्थापना करके बाद में परशुराम जी भगवान् शिव का धन्यवाद करने हेतु कैलाश पहुँचे। वहाँ प्रवेश के लिए निषेध करने के कारण गणेश जी से युद्ध करके उनका एक दान्त तोड़कर उन्हें एकदन्त बना डाला। परशुराम जी ने यह सब कुछ अपने लिए नहीं, आतताइयों से सदाचारियों को मुक्त करने के लिए किया। उपरांत अश्वमेध यज्ञ करके पृथिवी अपने गुरु कश्यप ऋषि को दान कर दी। गुरु आज्ञा से पृथिवी का त्याग करके उन्होंने समुद्र की शरण ली। द्वारिका से लेकर कन्याकुमारी तक का क्षेत्र परशुराम क्षेत्र कहलाता है। इस क्षेत्र में उन्होंने दीन, दलित और अभावग्रस्त लोगों को बसाया।

राममन्दिर आध्यात्मिक परम्परा का प्रतीक

भगवान् राम हमारे राष्ट्रीय आराध्य देवता हैं। राम जन्मभूमि हमारे आराध्य की जन्म भूमि है। इस स्थान पर भगवान् राम का मन्दिर बनना ही चाहिए। हमारी संसद को इस निर्माण के लिए विधान बनाना चाहिए। श्री हनुमान

राम की शक्ति हैं। समस्त भारतवासियों को इस शक्ति को अपनी भक्ति द्वारा जगाना चाहिए। भगवान् राम का शिविर /टेंट में रहकर गुजारा करना हमारी भक्ति भावना के ऊपर कलंक है।

श्री हनमान जी की शक्ति से श्रीराम को गति मिलती है। भ्रष्टाचार रूपी रावण श्रीराम की पूजा- प्रतिष्ठा के बिना नहीं मर सकता। राम - मन्दिर का निर्माण करोड़ों लोगों की आस्था का विषय है। इसके लिए दलों से ऊपर उठकर राष्ट्रीयता की भावना अपनाने की जरूरत है।

प्राचीन पारम्परिक राम मन्दिर का धवंस भारत का घोर अपमान था। उस अपमान के परिमार्जन या प्रक्षालन के लिए यह निर्णय आवश्यक है। रामजन्म भूमि हमारी उतनी ही पूज्य है जितने कि स्वयं राम। इस पवित्र भूमि का वर्णन रामायण में मिलता है। इस भूमि की पृष्ठभूमि में लाखों आस्थावान भक्तों का बलिदान रहा है। अयोध्या की सांस्कृतिक सीमांतर्गत इस भूमि में विदेशी आक्रमणकारी बाबर के नाम पर मस्जिद का निर्माण हमारी राष्ट्रीय आध्यात्मिक परम्परा पर तीव्र आघात होगा। उक्त मन्दिर के निर्माणार्थ हनुमान रूप शक्ति का जागरण अनिवार्य है।

इतिहास एवं साक्ष्य गवाह हैं कि बाबर ने राम मन्दिर को धवस्त करके उसके मलवे से मस्जिद बनाई थी। वहाँ पूजित शिला का न्यास होना चाहिए। जब तक हमारे जीवनादर्श राम भूखे विराज रहे हैं तब तक राष्ट्र को भोजन केसे मिल सकता है। खुदाई में मन्दिर के सबूत मिले हैं, शिव मन्दिर एवं अन्यान्य मूर्तियां आदि भी। हमारे संविधान की मूल प्रति में राम, सीता और लक्ष्मण के चित्र विद्यमान हैं। ये हमारे पूज्य आदर्श हैं। आजादी के बाद जिस तरह अंग्रेजों की दासता के निशान मिटाए जा रहे हैं उसी तरह मुस्लिम आक्रमणकारियों के चिन्ह भी मिटाए जाने चाहिए। सोमनाथ मन्दिर की दोबारा की गई प्रतिष्ठा में वहाँ से आक्रमणकारी मुस्लिमों के निशान मिटा दिए गए थे, वैसा अब भी किया जाना चाहिए। शरणागत की रक्षा करना भारत का सनातन धर्म है परन्तु आक्रान्ताओं की सी शेखी से किसी का यहाँ रहना भारत को गवारा नहीं है। जन्म देने वाली माँ और पोसने वाली माता भूमि दोनों मांएं हैं और हमारे लिए स्वर्ग से भी बढ़कर हैं। क्योंकि मन्दिर बुरी नियत से गिराया गया था, इसलिए अच्छी नियत से उसका निर्माण भी जरूरी है।

लघु बघाट ड्यारशघाट

ड्यारशघाट आधुनिक ग्राम पंचायत चामत भड़ेच के अन्तर्गत आता है। यह बघाट के बहु (विविध) घाटों में से एक है। पंचायत क्षेत्र के पूर्व में रामपुर गाँव से शांगड़ी गांव तक तथा उत्तर में धार से शशल तक फैला है। इस पंचायत क्षेत्र में प्राचीन बघाट कालीन रीति - रिवाज इकट्ठे एक जगह नजर आते हैं। इसलिए इसे लघु बघाट कहना बेहतर होगा। ड्यारशघाट में परम्परा से एक मेला मनाया जाता रहा है, देवठन को। आजकल इसको पंचायत मनाती है। मेले का आयोजन पंचायत स्तरीय निर्वाचित कमेटी करती है। शुभारंभ बीजेश्वर और ड्यारश देवताओं के पूजन से होता है। ज्ञात हो कि जटिल भूमि सम्बन्धी मामलों का निपटारा देवशक्ति या देवताओं से करवाया जाता है, अदृश्य बाधाओं सम्बन्धी मामलों का भी। राजा बीजेश्वर को अपने कार्यकाल में हिमाचल प्रदेश के अनेक राजाओं का समर्थन और शक्ति प्राप्त थी। आज भी यथावत् है। विविध स्थानेंपर स्थित बीजेश्वर के गौण मन्दिरों को देवथल के मन्दिर से ही शक्ति / अधिकार प्राप्त होते हैं। देवथल के आशीर्वाद के बिना कहीं भी बीजेश्वर की प्रतिष्ठा संभव नहीं होती।

ड्यारशघाट एक खुली ठण्डी हवादार जगह है, जहाँ से मतिउल टिब्बा और तहसील अर्की नजर आते हैं। पूर्व में सामने हरी - भरी करोल की चोटी नजर आती है, बर्फ से इसके ढक - जाने पर तो साक्षात् शिवलिंग जैसी लगती है।

अपना हाथ जगन्नाथ

आँखें मूंद कर अपनी जिम्मेदारी का काम दूसरे पर छोड़ देना हानिकारक माना गया है। इस बारे में यहां एक कहानी प्रचलित है। दो किसान भाई थे। बड़ा भाई अपने हाथों से किसानी करता था जबकि छोटा अपना काम दूसरों के जिम्मे छोड़कर मस्त और सोया पड़ा रहता था। बड़ा भाई निरंतर धनवान परन्तु छोटा निरन्तर गरीब होता गया। छोटा भाई इससे खिन्न होकर बड़े भाई से इसका कारण और उपाय पूछने लगा। बड़ा भाई तो उसकी उन्नति चाहता ही था। उसने कहा कि वह रोज सवेरे नदी के किनारे जा कर सफेद हँसों के दर्शन करे तो वह भी अमीर हो जाएगा।

छोटे भाई को बात पसंद आई और वह रोज सवेरे सफेद हँसों के दर्शन के लिए जाने लगा। खेतों के रास्ते जाते हुए उसने अपने नौकरों को अपनी गायों का दूध और पैदा हुए अनाज के आधे- आधे भाग को अपने- अपने घरों को ले जाते हुए देखा। उसको समझते देर न लगी कि उसके पीछे उसके नौकर ही छिपकर उसको नुकसान पहुंचा रहे हैं। उसने जाकर बड़े भाई का धन्यवाद किया कि उसने उसे सफेद हँसों के दर्शन के बहाने अमीर बनने का उपाय बता दिया। उसके बाद वह प्रतिदिन अपने हाथों से किसानी करते हुए नोकरों से अधिक फायदा लेने लगा। अब नौकर छिपकर उसे नुकसान नहीं पहुंचा सकते थे। किसी पूर्वज ने ठीक ही कहा है कि अपने जिम्मे का काम अपने हाथों से करके अमीरी का सुख मिल सकता है।

ब्राह्मण का कर्तव्य

बह्म को जानने वाला ही ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी है। ब्रह्मशक्ति अथवा परमात्मा को जानने का मनुष्य मात्र का अधिकार है| ब्रह्म कण-कण में बसा है। सर्वप्रथम ब्राह्मण ने ही सारे संसार को ब्रह्म का परिचय दिया। ब्राह्मण ब्रह्मा की सर्वप्रथम और ज्येष्ठ संतान है। ब्राह्मण का जन्म और कर्म दोनों अलौकिक हैं। ब्रह्म को जानने से ही ब्राह्मण को पंडित नाम से संबोधित किया जाता है। बह्मवेत्ता ब्राह्मण के स्मरण मात्र से पाप, दुःख और शाप कट जाते हैं।

ब्राह्मण समस्त जीवों के हित में काम करता है। किसी भी वर्ग पर विपत्ति आने पर वह दूसरों की परवाह किए बिना उसकी भलाई में प्रवृत्त हो जाता है। वह अन्याय का विरोध करके न्याय की स्थापना करवाता है। वह विनम्रता का उपासक है। उसने सदा से शासकों को सन्मार्ग दिखाया है। ब्रह्म ज्ञाता ब्राह्मण के सहयोग के बिना शासक उद्दंड और उत्पथगामी हो जाता है अथवा कर्त्तव्यविमुख हो जाता है। ऐसी अवस्था में ब्राह्मण ने सदा समाज की रक्षा में हाथ बटाया है।

प्रोत्साहित अवैज्ञानिक अंतर्जातीय विवाह हमारी आदर्श परम्परा के प्रतिकूल है तथा और भी अनेक प्रतिकूल नीतियां समाज और देश को आपस में बांट रही हैं। भारत की रक्षा उसकी पवित्र सनातन आध्यात्मिक परम्पराओं में निहित है। परम्पराओं में भौतिक पदार्थ बदल सकते हैं परन्तु परम्परा का मूल भाव यथापूर्व रहता है। इसे आज समझने और अपनाने की जरूरत है।

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चांबिके। धंटास्वनेन न: पाहि चाप ज्या निःस्वनेन च।।

भाग 2 बघाटी जन-जीवन में शक्ति पूजा

देवभूमि सोलन में देवी - देवताओं की उपासना परम्परा से चली आ रही है। यहाँ के लोगों की माताओं, देवियों, कन्याओं और नारियों के प्रति आदर भावना अनुकरणीय है। अध्यात्म शक्ति की उपासना इस क्षेत्र का प्राण है। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा जिसकी कोई कुलदेवी न हो। इस भाग में क्षेत्रीय शक्ति उपासना को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

अश्वपति कृत गायत्री स्तवराज

निम्नोक्त स्तोत्र के पाठ से राजा अश्वपति को संतान की प्राप्ति हुई थी। नित्य संध्या के बाद इस स्तोत्र के श्रद्धापूर्वक पाठ करने से गायत्री माँ प्रसन्न होकर जीवन को सुख - शांतिमय बनाती हैं।

सच्चिदानंद रूपे त्वं मूलप्रकृतिरूपिणी। हिरण्यगर्भरूपेत्वं प्रसन्ना भव सुन्दरि।। तेजःस्वरूपे परमपरमानंदरूपिणि। द्विजातीनां जातिरूपा प्रसन्ना भव सुन्दरि।। नित्ये नित्यप्रिये देवि नित्यानंद स्वरूपपिणि। सर्वमंगलरूपे च प्रसनन्ना भव सुंदरि।। सर्वस्वरूपे विप्राणां मंत्रसारे परात्परे। सुखदे मोक्षदे देवि प्रसन्ना भव सुंदरि।। विप्रपापेध्म दाहाय ज्वलदग्नि शिरवोपमे। ब्रह्मतेजः परे देवि प्रसन्ना.... ।। कायेन मनसा वाचा यत् पापं कुरूते नरः। तत्तत्स्मरणमात्रेण भस्मीभूतं भविष्यति।। स्तवराजमिदं पुण्यं संध्यां कृत्वा तु यः पठेत। पाठे चतुर्णाम् वेदानां यत् फलं लभते च तत्।

इस स्तोत्र के पाठ से चारों वेदों के अध्ययन का फल मिलता है, परन्तु स्तोत्र का अर्थ साथ में समझ कर। निर्गुण परमात्मा गायत्री माँ के सहारे अपना साकार रूप धारण करने में समर्थ होते हैं। गायत्री माँ परमपिता परमात्मा की धर्मपत्नी हैं तथा सारे ब्रह्माण्ड को भोजन और आवश्यक वस्तुएं प्रदान करती हैं। इसी कारण जगन्माता कहलाती हैं।

वेदों के अनुसार माँ का महत्त्व पिता से सौ गुना अधिक है। वे सभी प्राणियों के हृदय में परमात्मा की अंश होकर आत्मा के रूप में स्थित हैं। अतः हम सभी अपने हृदय स्थित, परमात्मांश गायत्री माँ में 'सोऽ हम्' अर्थात् 'मैं गायत्री (प्रकाश) रूप में वही परमात्मा हूँ' की भावना करें। यही गायत्री शक्ति की सच्ची उपासना है।

"मातृ शक्तिविज्ञान"

जो शक्ति माँ को पहचानता है वह मुत्यु पर विजय पा लेता है। यह शक्ति नित्य है और हमारे जन्म के साथ ही पैदा होती है। सत्त्वादि तीनों गुणों की साम्यावस्था को अव्यक्त, मूलप्रकृति या पुरुष कहते हैं। शक्ति के बिना जीव कुछ भी करने में असमर्थ होता है। शक्तिहीन होने पर शिव भी शव बन जाता है। माँ शक्ति ही ब्रह्मांड को पैदा करती हैं। भक्त पर कृपा करने के लिए ये कभी निराकार रूप धारण करती है तो कभी साकार रूप। सारे संसार में दिखाई देने वाले विविध आकार - प्रकार उसी शक्ति की विराट मूर्ति है।

जिस व्यक्ति को ब्रह्मशक्ति का अनुभव नहीं होता वह अपने बनाए हुए भ्रमजाल में ही खेलता रहता है। इसी महाशक्ति ने मनुष्य के अंदर अहंकाररूप महिषासुर का मर्दन किया था। भगवती माँ की आज्ञा अनुसार माँ के साथ मृत अहंकार (महिषासुर) की भी पूजा की जाती है। हम वस्तुः दोनों माँ और महिषासुर की संयुक्त मूर्ति में पूजा करते ही हैं। यह बात संगत ही है कि शक्ति को अहंकार के ऊपर सवार होना चाहिए, अहंकार को शक्ति के ऊपर नहीं।

ब्रह्मा-विष्णु-महेश तीनों महामाया के शक्तिजाल में बंधे हैं। ब्रह्म चैतन्य शक्ति रूप हैं। ये रजोगुण (गति) के सहारे सृष्टि को रचती हैं। ये जीवों को कठपुतली के समान नचाती हैं। जीव (मनुष्य) घृणा और लज्जादि पाशों (बंधनों) से बंधा है। इन पाशों से मुक्त व्यक्ति सदाशिव या परमात्मा कहलाता है। माँ (शक्ति) संसार का उपादान (दृश्य) कारण है। समस्त पदार्थों में शक्ति की सूक्ष्मता पाई जाती है। शक्ति ब्रह्म की आत्मा (केन्द्र) है। चेतना शक्ति के विकास में जगत् का उन्मेष (उदय) है। इसी शक्ति के संकोच में जगत् का अस्त है। शक्ति और शिव दोनों मिलकर शिवतत्त्व कहलाते हैं। गुण रहित ब्रह्म ही परमात्मा है। संसार को रचने की इच्छाशक्ति और उसके विस्तार का नाम ही शक्तित्त्व है।

शिव की संकुचित अवस्था जीव है। परमात्मा की नित्यशक्ति को कालतत्त्व संकुचित करता है। तमोगुण प्रधान अंतःकरण या अहंकार विकल्प (भ्रम) का कारण है। विकल्प (भ्रम) के कारण ही अभेद में भेद का अनुभव हो रहा है। शक्ति का अंतर्मुख होना ही शिवतत्त्व है। शिव का बहिर्मुख होना ही शक्तितत्त्व है। शिव- शक्ति दोनों भाव सनातन हैं। रुचियों की विविधता के कारण परमात्मा का पुरुषत्व और स्त्रीत्व है। कंस और महिषासुर आदि ने अहंकारवश द्वेषभाव से ब्रह्म की साधना की थी।

शिव और शक्ति सूर्य और प्रकाश की तरह अभिन्न हैं। जिस प्रकार सूर्य अपने आप बादल समूह को पैदा करके अपने मूल रूप को ढक लेता है उसी प्रकार आत्मा स्वयं उत्पादित अज्ञान से अपने मूल रूप को ढक लेता है।

मदिरादि पंच मकार संसार में बंधन के हेतु हैं। मकारों के प्रति वासना (भूख) का त्याग करना सरल नहीं है। जो मनुष्य जिस वस्तु को खाता / प्रयोग करता है उसकी दृष्टि में उसका देवता भी उसे ग्रहण करता है। मांसादि मकारों का स्वाद उसे गुलाम बना देता है, अतः अपनी इच्छापूर्ति हेतु पाप से बचने के लिए वह उन्हीं मकारों को भगवान को भेंट करता है। उस पापपूर्ण कृत्य की सजा इसे जन्मांतरों तक भोगनी पड़ती है। देवता उसके छल को समझ जाता है परन्तु ऐसे भोगी लोगों का वेदों में अधिकार नहीं होता। अतः ऐसे लोगों के लिए वेदों से पृथक तंत्र मार्ग रखा गया है। भोगों में आसक्त ऐसे लोगों के लिए ही मकार अथवा तंत्र मार्ग का विधान है। यह मानकर कि एक न एक दिन उसका भी आसक्ति से मोह भंग होगा और वह भी परमात्मा की प्राप्ति की ओर अग्रसर होगा।

पशुबलि विप्रों के लिए वर्जित है। त्रिपुरोपनिषद् के अनुसार श्रीविद्या वेदों से तंत्र में आई है। महिषासुर शिव का स्थूल अंश है। तंत्र में भोगासक्त लोगों के लिए भोग मार्ग से ही त्याग का विधान बताया गया है। देवी सौम्यमूर्त्या देवताओं का पालन तथा घोरमूर्त्या असुरों का नाश करती हैं। भगवान् कृष्ण चेतनाशक्ति रूप हैं। चेतना शक्ति के मूर्तविग्रह का नाम योगमाया है। भगवान् कृष्ण की लीला योगमाया के सहारे संपन्न होती है। योगमाया अद्भुत घटना को दर्शाने में कुशल है। परा अपरा प्रकृति का नाम ही संसार है। देवी गीता ब्रह्मविद्या का सार है। दक्ष के अनुसार समाधिस्थ शिव ने उसका अपमान किया था। भगवान् शिव ने महाक्रोध में दश महाविद्याओं का रूप धारण किया था। महाक्रोध रूद्र का रूप होता है। आश्विन शु0 अष्टमी के दिन दक्ष यज्ञ का ध्वंस हुआ था। तारा माता भवसागर से पार उतारती हैं। दुनियादारी के प्रति आसक्ति ही भवसागर है। तारा माता तो भीषण आपदाओं से भी पार करवा देती हैं।

शक्तिहीन देवता भी प्रेत कहलाते हैं। यही कारण है कि शक्ति रहित शिव को शव कहा गया है। काल या समय को नियंत्रित करने वाली काली कहलाती है। काली माता ने पितृ हत्या के दोष से बचाव हेतु छायासती को पैदा किया और स्वयं चित्कलारूप से यज्ञाग्नि में प्रवेश कर गई। छायासती के क्रोध से भद्रकाली पैदा हुई। शिव ने छायासती के

शरीर को सिर पर उठाकर घुमाया और कामगिरि (आसाम) में उसके योनिमंडल को गिराया। वहां ये पत्थर के महापीठ पर ज्योति स्वरूप में विद्यमान हैं। वहीं सतत जलधारा युक्त योनिमुद्रा रूप त्रिकोणमण्डल त्रिपुर स्थित है।

गायत्री संध्या विज्ञान

मानव मात्र का हर दिन गायत्री माँ की संध्या या स्मरण से आरम्भ होता है। गायत्री मंत्र का विधिवत् अर्थ समझकर जप करने से जीवन की समस्त समस्याएं दूर होती हैं। हमारा हर काम भगवन्मय हो जाता है। हमारा अपना काम भगवत् प्राप्ति का साधन बन जाता है। दुनिया भर के समस्त देवताओं का निवास गायत्री मंत्र के अंदर है। गायत्री मंत्र के रूप में हर देवता प्रसन्न हो जाता है।

गायत्री मंत्र मातृदेवता का स्वरूप है। ये हमारे प्राणों (जीवन) की रक्षा करती हैं। यह अपना जप (अर्थज्ञान पूर्वक स्मरण) करने वाले की रक्षा करती है। माँ परब्रह्म (परमात्मा) स्वरूपा हैं। मंत्र की अधिष्ठात्री देवी ब्रह्मतेजोमयी शक्ति है। गायत्री जप का मतलब है भगवान् के साथ एकता की स्थापना। गायत्री माता के संस्कार डालने से व्यक्ति का दूसरा (संस्कृत) जन्म होता है। ब्रह्म (परमात्मा) ही चेतनारूप गायत्री है। जैसे विशेष मणि के स्पर्श से तांबा सोना बन जाता है वैसे ही गायत्री के स्पर्श से व्यक्ति का जीवन सुसंस्कृत और सुसभ्य हो जाता है। गायत्री मंत्र के साथ रहने वाला आत्मा द्विजात्मा कहलाता है। गायत्री के बिना व्यक्ति (आत्मा) का पतन हो जाता है।

शास्त्र-अनुसार केवल गायत्री मंत्र में निपुण व्यक्ति भी मोक्ष प्राप्त कर लेता है। गायत्री संध्या से अध्यात्म या आत्मशक्ति बढ़ती है। आत्मशक्ति से परमात्मा की समीपता प्राप्त होती है। यह सारा संसार गायत्री का ही रूप है। यही सरस्वती है। सब प्राणियों में निवास करती हैं। गायत्री के विज्ञान (रहस्यज्ञान) से मुक्ति मिलती है। गायत्री मंत्र का जप उत्तम है। यह सभी इच्छाओं को पूरा करती है। ये वरदान देने वाली वेदों की माता हैं। माँ तेज स्वरूप हैं। संसार की माँ हैं। समस्त वेदों की सारांश रूपा हैं। गायत्री साक्षात् परमात्मा रूपा हैं। गायत्री (शब्दार्थ) के रहस्य ज्ञान से गायत्री प्रसन्न होती हैं।

गायत्री की तीन व्याहृतियां (सूक्ष्म गायत्री) सत्त्व, रज और तम रूप हैं। माँ चित् (चेतना) रूप में सब कुछ प्रकाशित या ज्ञापित करवाती हैं। सवनात् अर्थात् सवन या प्रेरणा करने से इन्हें सावित्री कहते हैं। भा या किरणों से सर्वत्र गतिशील होने के कारण भर्ग देवता कहलाती हैं। अथवा ये अविद्या रूप दोष को नष्ट करती हैं। भर्ग देवता को तेज, प्रकाश, ज्ञान और चैतन्य लक्षण वाला भी कहते हैं। ये हृदय रूप आकाश में जीवात्मा रूप में तपस्यारत हैं। इनका प्रकाश विविध रंगों वाला है। यह अखंडानंद स्वरूप है। यही आनंद ब्रह्म या परमात्मा की मूर्ति है।

भर्ग देवता हमें धर्म, अर्थ और काम में लगाते हैं। कल्याणकारी कामों में लगाते हैं। ब्रह्मत्व की प्राप्ति में लगाते हैं। मंत्र में चौबीस अक्षर हैं। पच्चीसवां अक्षर प्रणव अथवा पुरुष है। गायत्री तत्त्व (रहस्य) का गान करती हैं। सबको अपना अपना काम करने हेतु प्रेरित करती हैं। जन्म - मरणादि दुःख के नाश तथा परम स्वतंत्रता लाभ के लिए इनका वरण या आश्रय लिया जाता है। माँ बाहर और अन्दर के तमस् या अंधकार का नाश करती हैं। सांसारिक भयों से बचाती हैं। भर्ग देवता साक्षात् विष्णु हैं जिनके ज्ञान से अमरता प्राप्त होती है। ये ही खाया- पीया पचाती हैं| गायत्री मंत्र के जप द्वारा हम ब्रह्म को धारण करते हैं। तेज या प्रकाश के देवता अग्नि हैं। भर्ग देवता तीनों लोकों के सार

(आत्मा) हैं। यह तीनों लोकों में व्याप्त हैं। यह प्रकाश करने वाले देवता परमात्मा हैं। तीनों लोक ब्रह्म या परमात्मा स्वरूप हैं। वे हमें प्रचोदयात् अर्थात् प्रेरित करने की कृपा करें।

भर्ग देवता जीवों का भरण या पोषण करते हैं। समस्त लोकों में वाक्शक्ति या सरस्वती ही प्रधान हैं। माँ अपना जप करने वाले का उद्धार करती हैं। सर्वत्र गमनशील हैं। यत्री का मतलब है नियंत्रिका। ये परमेश्वर की सब वस्तुओं में सर्वव्यापिनी शक्ति हैं। शरीर के मूलाधारादि चक्रों को पार करके हमारी रक्षा करती हैं। माँ ब्रह्मप्राप्ति का दरवाजा हैं।

जिनका यज्ञोपवीत संस्कार हो जाता है उन्हें शाक्त कहते हैं। वे आदि (प्रथम) शक्ति की उपासना करते हैं। समस्तवेद गायत्री से ही प्रवृत्त (कार्यरत) होते हैं। श्रीमद्भागवत पुराण गायत्री का भाष्य (विशेष अर्थ) है। यह मंत्र वेदपाठ का फल और सर्वविध सुख प्रदान करता है। गायत्री संध्या (उपासना) से व्यक्ति का जन्म (जीवन) दिव्य या देव संचालित हो जाता है। क्षत्रियादि वर्ण अपने अपने स्वभाव को पारकर ब्रह्मभाव में पहुंच जाते हैं। माँ षट्चक्रों में धीमी मधुर आवाज के साथ भ्रमण करती हैं।

गायत्री मंत्र के अर्थ का विज्ञान

गायत्री माँ परमशक्ति हैं। ये सारे विश्व में व्याप्त हैं। सारा विश्व गायत्रीमंत्रमय है। कण कण में गायत्री माँ हैं। गायत्री संध्या से कण कण में स्थित माँ प्रसन्न होती हैं। जप करने वाले पर वे अपनी कृपा बरसाती हैं। उसके सब मित्र बन जाते हैं। वसुधा ही उसका अपना परिवार बन जाता है। वह सब की भलाई करता है और सब उसकी भलाई करते हैं। हर जीव ब्रह्ममय बन जाता है। सभी वस्तुओं में एक ही ब्रह्म के इलावा कुछ और नजर नहीं आता। इसके बाद न कुछ जानने को शेष रहता है और न कुछ प्राप्त करने को। यही गायत्री संध्या का फल, परमानंद या मोक्ष है।

गायत्री माँ षट्चक्रों में सोए हुए सर्प के समान स्थित हैं। कमलिनी के धागे के समान बारीक हैं। मूलाधार चक्र (कमल) में विद्युत् पुंज के समान चमक रही हैं। सृष्टि में सर्वप्रथम प्रकट हुई हैं। दुनिया के सारे मंत्र गायत्री मंत्र के अंदर समाए हुए हैं। ये ब्रह्मा के मुख से पैदा हुई हैं। शास्त्रनुसार गायत्री जप का अधिकार केवल यज्ञोपवीतधारी को है। भगवती गायत्री ब्रह्मलोक में रहती हैं। स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा और दीक्षा सभी गायत्री माँ से उत्पन्न हुए हैं। ये सभी इच्छाओं को पूरी करने वाली कामधेनु हैं। सभी वस्तुओं में रहती हैं।

गायत्री मंत्र में आठ आठ अक्षरों के तीन चरण हैं। एक बूंद में समुद्र की तरह उसमें सारे विश्व के ज्ञान-विज्ञान समाए हुए हैं। ये जगत् पिता परमात्मा से सौ गुणा अधिक महिमा वाली हैं। ये तीनों लोकों की माँ हैं। इस मंत्र में ब्रह्म (वेदान्त) सूत्र समाए हुए हैं। उस परमात्मा ने मनोरंजनार्थ जब दो बनना चाहा तो उससे ब्रह्मांड को पैदा करने वाली शक्ति या ज्योति उत्पन्न हो गई जिससे सारे संसार का विस्तार हो गया।

भगवती गायत्री अपने सत्वादि तीन गुणों से संसार को चलाती हैं। ये महिष (भैतिकतावादी अहंकार) के विरुद्ध मंत्र रूप अस्त्र वाली हैं। मंत्र का भूकार इच्छाशक्ति के रूप में मूलाधार चक्र में रहता है। भुव क्रियाशक्ति के चक्र में तथा स्व: ज्ञानशक्ति रूप सुरलोक या देवलोक या सहस्रार में रहता है। संसार की वस्तुओं में जो भेद नजर आता है वह बुद्धिभ्रम के कारण है। चेतन ब्रह्म की इच्छा से समता (प्रलय) को प्राप्त हुए तीन गुणों में हलचल पैदा होती है और वे विषमावस्था (संसार) को प्राप्त हो जाते हैं।

जीव और ब्रह्म (परमात्मा) के बीच में मुख्य मायाबीज सूक्ष्म आवरण (वस्त्र) ह्रीं अक्षर है। उस मायाबीज की उपासना से वह आवरण हट जाता है। इस मंत्र के परमोपासक आत्रेय हुए हैं। इसके चार चरण चार वेद हैं। व्याकरण सिर है। सः से यह सांस लेता है तथा हं से सांस छोडता है। यही सोऽहं या हंस जप है। गायत्री मंत्र सूर्य के अंदर की ज्योति या हृदयस्थ जीवात्मा है। भर्ग देवता भगवान् के लिए कर्म करने की प्रेरणा देते हैं। ये ही परमात्मा रूप गायत्री के पच्चीसवें अक्षर (प्रणव) हैं। ये जन्म-मरण रूप भय के नाश के लिए वरेण्य या सहारा बनाने योग्य हैं। गायत्री मंत्र सनातन (नित्य) प्रकाश रूप है। यह तीनों गुणों के अंदर विद्यमान है|

माँ धर्म और अधर्म में से धर्म (सर्वजीवहित) का पक्ष लेती हैं। ब्रह्म जब प्रकट होना चाहते हैं तो नाद (धवनि) ब्रह्म में हलचल होती है। उससे शक्ति सहित ब्रह्मादि तीन देवताओं की उत्पत्ति होती है। गायत्री का बहिर्मुख बीज क्लीं तामस है। वेद या ईश्वरीय ज्ञान का शत्रु ब्रह्मा का सृष्टि रचने का अहंकार बना। उससे दो असुर मधु और केटभ उत्पन्न होकर ब्रह्मा को मारने में तत्पर हो गए। अहंकार अहंकारी को मारता है। परमात्मा के स्मरण को ढकने वाला आवरण तमोगुण कालरूप है। अहंकार काल (मधु केटभ) रूप है। गायत्री माँ चौबीस अक्षरों वाली है।

गायत्री का गर्भ गुरु (ब्रह्मा) का मुख है। गायत्री का उपासक विश्वामित्र (संसार का दोस्त) हो जाता है। गायत्री मंत्र का पिता पच्चीसवां अक्षर (प्रणव) है। यज्ञोपवीत गुरु ब्रह्म की मूर्ति है। गायत्री उपासना का लाभ जीवन का रूपांतरण या परिष्कार है। श्रीमद् भागवत पुराण का दसवां स्कंध रासपंचाध्यायी गायत्री की साक्षात् मूर्ति है। गायत्री संध्या ब्रह्म या परमात्मा की संध्या (उपासना) है। उपासना से परमात्मा की निकटता मिलती है। निष्काम अर्थात् बिना कुछ मांगने से गायत्री के जप से परमात्मा की प्राप्ति होती हैं। इच्छा करने वाले की वे केवल उसकी सीमित इच्छा पूरी करती हैं। गायत्री जप से आत्मशक्ति बढ़ती है जिससे व्यक्ति का सर्वविध कल्याण होता है। जो गायत्री का जप नहीं करते वे परमात्म प्राप्ति (परमानंद) से वंचित रह जाते हैं। गायत्री संध्या (उपासना) न हो तो समस्त लोकों का नाश हो जाता है, क्योंकि तमोगुण (अज्ञान) के साम्राज्य में सब आपस में यादवों की तरह लड़-कट मर जाएंगे।

गायत्री विज्ञान का रहस्य

गायत्री मंत्र का जप उसके अर्थ को मन में रखकर किया जाता है| गायत्री का सार अर्थ उसका स्वरूप प्रकाश है। ब्रह्मादि देवता भी इस मंत्र का अर्थध्यानपूर्वक जप करते हैं। आदिशक्ति की सभी उपासना करते हैं। अलग - अलग चरणों को क्रमशः जपने से ब्रह्महत्यादि (बड़े से बड़े पाप) का नाश होता है। जप का फल आत्मज्ञान या आध्यात्मिक जीवन शैली है। इससे महाबली मन को ससैन्य एक सही उद्देश्य मिलता है। स्तुति गाने से माँ प्रसन्न होती हैं। ये प्रसन्ना होकर संसार का उपकार करती हैं। गायत्री संध्या में आह्वान, अंगन्यास, ध्यान, जप और विसर्जन मुख्य हैं। यह प्रलय होने पर भी ध्वनिरूप में शेष बनी रहती हैं। 25 अक्षरों वाली गायत्री हमारी माता और पिता हैं। नाद (ध्वनि) ब्रह्म में कंपन होने से ही संसार का संचालन होता है।

भू: से अभिप्राय है बिना किसी आसक्ति के शक्ति का संचय करते रहना। भू: से अभिप्राय है सभी जीवों के हित की दृष्टि या सोच रखना। स्व: का अर्थ है विवेक के साथ सत्य का आचरण करना।

गुरु के मुख से ग्रहण की गई गायत्री माँ से दूसरा जन्म होता है। दूसरा जनम ही असली जन्म है। पहला जन्म तो गायत्री शक्ति से रहित शव रूप होता है। शव में शक्ति के संचार से वह शिव अर्थात् कल्याणकारी हो जाता है।

यज्ञोपवीत के सूत्रों में नो देवताओं का निवास होता है। देव सदगुणों को कहते हैं। सूर्य देवता में पराक्रमशक्ति है। गायत्री की दीक्षा का अभिप्राय है वेदारंभ। इसके बाद उसका वेदाध्ययन में अधिकार हो जाता है। गायत्री संध्या न करने से व्यक्ति अपवित्र, शक्तिहीन और शवरूप हो जाता है। वह अज्ञानी हो जाता है। उसके जीवन कार्यों में परमात्मा सम्मिलित नहीं रहते। जो व्यक्ति गायत्री मंत्र के अर्थ (विज्ञान) को जानता है वह तेजस्वी और बलवान होता है। संध्या से पहले हाथ - पांव धोना, शिखा को बांधना और यज्ञोपवीत धारण करना जरूरी है।

यज्ञोपवीत के अन्दर गुणों सहित प्रणव, अग्नि, सर्प, सोम, पितर, प्रजापति, वायु, यम और विश्वदेव नौ देवताओं का निवास है। जप, गान और मनन से माँ छः चक्रों की रक्षा करती है। छः चक्र पूरे शरीर के नियंत्रक केन्द्र हैं। गायत्री की साधना से दिव्यत्व (विशिष्टता) प्राप्त होती है। हंस गायत्री प्राकृतिक मंत्र है। ब्रह्म या परमात्मा प्रकृति - पुरूष युक्त है। इस शरीर रूप तालाब में आत्मा (चेतना) हंसरूप में विचरण करता है। हंस शब्द आत्मा की प्राप्ति का दरवाजा जैसा है। वेद और तंत्र के मतानुसार सहज हंसविद्या आत्मप्राप्ति का मंत्र है।

भैरव देवता शक्तिपीठ के क्षेत्राधिपति होते हैं। शक्तिपीठ इकावन हैं। परा शक्ति (परमात्मा) शरीर के अंदर के पीठों में भी रहते हैं। इकावन अक्षर इसके रूप हैं। जो क्षरित (नष्ट) नहीं होता वह अक्षर है। हर चक्र (कमल) शक्तिपीठ है। तंत्र में भी चक्र (मंत्र) पिंड और अंड के समूह का परिचायक है। परमशिव उसका आसन है। ब्रह्मांड में शक्ति ही प्रधान है।

गायत्री माँ का गोत्र सांख्यायन है। गायत्री का तिल से होम करना सर्वपापनाशक है। शिखाधारण से यश और श्री (संपूर्णसुख) मिलते हैं। उपनयन संस्कार का अभिप्राय है आचार्य या गुरु के समीप जाना। वेदाभ्यास करना यज्ञोपवीतधारी की बड़ी तपस्या है। उसको अपने वेद की अपनी शाखानुसार अध्ययन और कर्म करना होता है। आजकल चूड़ा, वेदारंभ, समावर्तन और मेखलाबंध आदि उपनयन संस्कार के साथ ही संपन्न होते हैं।

उपनयन संस्कार में क्रमश: यज्ञोपवीत धारण, पलाशदंडधारण, दीक्षालग्नदान, अभिवादन और आशीर्वाद, समिधा लाना, भिक्षा हेतु जाना, ब्रह्मचारी के नियमों का पालन, भूमि पर सोना, नमक खाने का त्याग, गुरु के पास नीचे बैठना, व्यर्थ न बोलना, दिन में न सोना, एक सो आठ मंत्र जपना, लंबी आयु पाने के लिए शिखा के और चार महीने बाद जनेऊ बदलना आदि कर्म एवं नियम अपनाए जाते हैं |

यज्ञोपवीत, गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ बदला जाता है। शिष्य की माँ सावित्री और पिता आचार्य कहलाते हैं। जनेऊ की मुख्य ग्रन्थि में गांठें विषम संख्या में होती हैं। विषमता शक्ति की प्रतीक है। ब्रह्मसूत्र या जनेऊ ब्रह्मतत्व या वेदतत्त्व या ब्रह्मज्ञान का सूचक होता है। गाए और यज्ञोपवीत धारक की रक्षा के लिए अपनी मौत की भी परवाह नहीं करनी चाहिए, ऐसा माँ मदालसा ने कहा है। गायत्री उपासक सदा सज्जनों की रक्षा करें। शिष्य में श्रेष्ठता या धर्म का आधान (संचार) करना संस्कार कहलाता है। संस्कार (श्रेष्ठता या धर्म) रहित व्यक्ति का जन्म (जीवन) निरर्थक होता है। संस्कार से वासना (आसक्ति) के नाश से मन का विलय (नाश) हो जाता है। वासना बुरे स्वार्थपूर्ण संस्कारों को कहते हैं।

स्नेहमयी माँ शूलिनी दुर्गा

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

दुर्गा माँ परमस्नेहमयी हैं। ये अपने भक्तों की रक्षा के लिए त्रिशूल (शस्त्र) धारण करती हैं। इनका त्रिशूल सत्त्व, रज और तमोमय संसार से पार करवाकर परमानंद दिलाता है। ये भक्त को त्रिगुणातीत (आनंदमय) बना देती हैं। शूलिनी माता व्यक्ति की शूल या पीड़ा (दुर्गुण) को हर लेती हैं। शिवपुराण के अनुसार एक दुर्गम नाम का दैत्य था। उसने ब्रह्मा जी से वरदान पाकर चारों वेदों को लुप्त कर दिया। परिणामतः संसार में वेदों के अभाव में ब्राह्मण और देवता भी दुराचारी बन गए। दान, यज्ञ और हवन बंद हो गए। यज्ञादि परोपकार के बिना सौ सालों तक बरसात न हुई, तीनों लोकों में हाहाकार मच गया। जलस्रोत सूख गए। विपत्तिग्रस्त समस्त देवता योगमाया (आत्मशक्ति) की शरण में गए और दुर्गम के अत्याचारों से बचाव के लिए प्रार्थना की।

दयालु माँ ने अपने असंख्य नेत्रों से आँसुओं की हजारों सालों तक जलधाराएं बहाईं। इससे जनता और औषधियां तृप्त हो गईं। योगमाया ने देवताओं और परोपकारियों की प्रार्थना स्वीकार की। दुर्गम (दुर्बुद्धि) ने यह जानकर अपनी आसुरी सेना (बुरे विचार) से देवलोक (आत्मशक्ति) को घेर लिया। उधर माँ ने भी अपने तेजोमण्डल से असुरों से पीड़ित देवलोक को घेर लिया।

दैत्यों ने माँ पर आक्रमण किया। माँ के दिव्य शरीर से काली और तारा आदि दस महाविद्याएं असंख्य मातृकाओं के साथ प्रकट हुईं। इन्होंने दुर्गम की सेना को काट डाला। माँ ने दुर्गम को त्रिशूल (आध्यात्मिक ,आधिभौतिक, आधिदैविक पीड़ाओं से) असुरों को मारकर वेदों को देवताओं के हाथों में सौंपा। दुर्गम (अज्ञान) को मारने से वे दुर्गा कहलाई तथा त्रिशूल से उसे भेदने के कारण शूलिनी कहलाई। वे अपने शूलों से भक्तों के दुःखों को हरती हैं।

सोलन क्षेत्र की अधिष्ठात्री देवी माँ शूलिनी हैं। मार्कण्डेय पुराण के अनसार भगवान् शंकर ने एक शूल माँ दुर्गा को दिया था। इसी से उन्होंने अत्याचारी असुरों का संहार किया था। देवी भागवत के गायत्री सहस्रनाम में माँ का एक नाम शूलिनी भी आया है। सोलन स्थित माँ शूलिनी की छः बहनें हिंगलाज, ज्वाला जी, लगासनी, नैना देवी, नाउगी देवी और तारा हैं। शहर के पूर्व में पुराने शिल्ली रोड पर इनका भव्य मन्दिर है। बघाट राजवंश की कुलदेवी होने पर भी प्रजा के कल्याणार्थ राजधानी सोलन में उनकी स्थापना की गई थी। सनातनी लोग यहाँ शक्ति उपासना की परंपरा बघाटराजवंश से भी पूर्व की मानते हैं।

आषाढ़ महीने के दूसरे इतवार को सोलन का मेला लगता है। आजकल सोलन में मेलों और पर्वों पर भण्डारे (यज्ञ भोज) देने का रिवाज है। आज से सो साल पहले गंज बाजार में दुर्गा का दूसरा मंदिर बनाया गया। उस स्थान पर देवी की एक पिंडी या अस्पष्ट मूर्ति प्रकट हुई थी। मूर्तिविदों के अनुसार यह पिंडी शूलिनी माँ की थी। मेले में पुराने मंदिर की माँ गंज बाजार में अपनी बड़ी बहन को मिलने आती हैं। तीन दिन वहां मेहमान रहती हैं। माँ की पूजा से मेला आरंभ होता है। राजवंशीय या क्षेत्र का प्रमुख नागरिक माँ को पालकी में बैठाता है। माँ के मुख्य कल्याणे धरोट निवासी एक विशेष ब्राह्मण परिवार देवी माँ के साथ के मुख्य कार्य निभाते हैं। एक कल्याणा पं0 श्री लक्ष्मीदत्त जी के अनुसार उनके वंशजों को देवी पूजा में जाग्रा और मेले सहित छमाही पूजा में नया अनाज भेंट करना तथा भाग लेना जरूरी होता है अन्यथा उन्हें इसका खोट (दोष) लगता है और दंड (भेंट) भुगतना पड़ता है। आजकल बकरे की बलि बंद है परन्तु परंपरानुसार उन्हें जेठे बेटे की बधाई पर एक जीवित बकरा (केवल उपचार) भेंट करना पड़ता है। उनके

अनुसार उनकी वंशज नई पीढ़ी नोजवान वहां हाजरी तो भर देते हैं पर अपनी परंपराओं को अपनाने में आम तौर पर रूचि नहीं लेते हैं।

मेले के दौरान माँ की सजी भव्य मूर्ति की शोभायात्रा का शहर में एक विशेषाकर्षण होता है। पहले मेला माँ के मंदिर के पास लगता था परन्तु अब यह ठोडो ग्राउंड में लगता है। ठोडा नृत्य में तीर कमानों से पारंपरिक युद्ध कौशल दिखाया जाता है। यह कौशल भ्रष्टाचार या बुराई के ऊपर अच्छाई की विजय के लिए प्रयत्नशीलता का प्रेरक प्रतीक है। इसका आयोजन मेला कमेटी और राज्य प्रशासन मिलकर करते हैं।

शूलिनी मंदिर में माँ के इलावा शिरगुल और माली देवताओं की मूर्तियाँ भी हैं। किसी के मत में रियासत की नींव राजा बिजली देव ने डाली थी। इसकी राजधानियां क्रमशः जौणाजी, कोटी और सोलन रही हैं। मेला क्षेत्र को रक्षा और समृद्धि देता है। आजकल इस ग्रीष्मोत्सव के नाम से प्रचलित मेले का आरम्भ माँ की पालकी और विविध झांकियों से होता है। पारम्परिक लोकवाद्यों की पावन ध्वनि सुनते ही बनती है। परिसर और मेले का प्रबन्ध “माता शूलिनी मन्दिर न्यास” करता है। प्रथम दिन सवेरे पुरानी कचहरी के पास पालकी दर्शनार्थ रखी जाती है। फिर गंज बाजार, मुख्य बाजार, पुराना बस अड्डा, माल रोड होकर गंज बाजार के मन्दिर में निवास करती हैं। वहाँ तीनों दिन भजन - कीर्तन होते हैं। तीसरे दिन अपने गूर (दिवां) के माध्यम से भक्तों पर कृपा करती हैं।

घर -घर में उपासित माँ

कोई शूलिनी मन्दिर के दर्शन कर सके या न परन्तु मातृशक्ति की उपासना घर - घर में अवश्य की जाती है। सबसे पहले तो पंचायतन देवताओं में ही शक्ति (पार्वती) पूजित होती हैं। इन्हीं में सूर्य देवता शामिल हैं। सूर्यार्घ्य में वस्तुतः सूर्यशक्ति गायत्री या सावित्री की पूजा हो जाती है। यज्ञोपवीत धारी हर व्यक्ति विधिवत् गायत्री की पूजा करके एक सौ आठ मंत्र बोलता है। यह नित्यकर्म है। गायत्री माँ नित्य सिद्ध परमेश्वरी है। ये सविता या सूर्य से उत्पन्न हुई थीं। फलतः इनका नाम गायत्री प्रसिद्ध हो गया। सूर्य ने इन्हें ब्रह्मा को अर्पित किया था। अतः ब्रह्माणी कहलाई। मध्यान्ह में वैष्णवी और सांझ को शिवा या रूद्राणी कहलाती हैं। ये तीनों एक ही महाशक्ति के संध्या काल एवं कार्यानुसार तीन नाम हैं। माँ गायत्री समस्त ज्ञान - विज्ञानों की मूर्ति हैं। इनको परब्रह्म स्वरूपा बताया गया है। प्रातः काल में हंस (विवेक के) वाहन पर बैठी कुमारी रूप में रक्त वस्त्र (किरणें) पहने कमंडलु धारण किए ब्रह्मशक्ति कहलाती हैं। यही ब्रह्माणी गायत्री, सावित्री और सरस्वती कहलाती हैं। संसार में चेतन -अचेतन वस्तुएं सभी गायत्री रूप हैं। यह मंत्र सबसे बढ़कर पापनाशक और पवित्र है। यह मंत्र चारों वेद संहिताओं में मिलता है। मंत्र में जगत्कर्ता परमात्मा से सन्मार्ग (यज्ञादि परोपकारों) को अपनाने की प्रेरणा मांगी गयी है। ऋषि याज्ञवल्क्य ने अपने गायत्री भाष्य में मंत्र के चौबीस अक्षरों (दिव्यशक्तियों) की विस्तृत व्याख्या की है। इस महामंत्र के द्रष्टा (अनुभवकर्ता) ऋषि संसार के मित्र विश्वामित्र हैं। ये अष्टाक्षरी तीन चरणों के कारण त्रिपदा (त्रिलोकव्यापिनी) कहलाती हैं। माँ शूलिनी, गायत्री, जन्मदात्री या अन्य अपने भक्तों के दैहिक, दैविक और भौतिक दुःखों को हर लेती हैं। कुमार्गियों को उन्हीं से पीड़ा (चेतावनी) देकर संसार को सन्मार्ग पर लौटने का अवसर देती हैं।

संसार परमशक्ति का विलास

परमशक्ति जो भी रूप धारण करना चाहती है कर लेती है। इसके रूपों और इच्छाओं की कोई संख्या नहीं है। जब उसका (परमात्मा का) मन नहीं लगा तो वह एक से दो हो गया। वह निरंतर ऊर्जा रूप है। उसने अपनी ऊर्जा को घनीभूत किया और उसी से अपने (चेतना रूप) को ढक कर उस ऊर्जा के अंदर असंख्य खेल खेलने शुरू कर दिए। वह अपने खेलों (संसार को देखने) में आनंद लेता रहता है परन्तु उसमें आसक्ति (ममता) नहीं रखता। अपने रचे हुए विविध रूपों के अंदर अपने आप (परमात्म शक्ति रूप) को देखता रहता है, यह अनुभव करते हुए कि यह सब (संसार) मैं ही तो हूँ। यही उसका आनंदमय विलास (खेल) है

संसार का हर जीव उस परमशक्ति की संतान है। हर जीव में स्वयं गतिमान हो रही हैं। परम शक्ति की संतान होने के नाते हमारा भी कर्त्तव्य बनता है कि कारणगुणपूर्वक हम भी अपने अंदर के इस परमात्मविलास का अनुभव करें और आनंद पाएं। अपने आप के जन्म, विकास और लय को समझें। वस्तुतः न कोई जन्म लेता है न मरता है बल्कि परमशक्ति हमारे माध्यम से विस्तृत और संकुचित होती रहती है। परमात्मा चाहते हैं कि हम भी उनकी आनंदानुभूति के साथ अपने तार जोड़ें। मनुष्यमात्र को इस आनंदानुभूति के दुर्लभ अवसर को चूकना नहीं चाहिए।

राजपरंपरा में तारा माँ

संभवत: 1929 में राजा दुर्गा सिंह ने अपनी माता तारिणी के नाम पर तारिणी संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना की थी। वे तारा (महाविद्या) माता की उपासिका थीं। राजा साहब अपनी माँ के परमभक्त (शाक्‍त) थे। इस प्रसंग में यहाँ महाविद्या तारा की चर्चा अप्रासंगिक न होगी। इस जानकारी के लिए में "तारा देवी मंदिर" पुस्तक के लेखक पं0 श्री हीरा लाल जी का विशेष आभारी हूँ! भगवती माता वैदिक काल से लेकर आदिशक्ति, सती, भवानी, दुर्गा, तारा और चामुंडा आदि नामों से विख्यात रही हैं। प्राचीन काल में विधर्मी (अहंकारी) महिषासुर ने समस्त देवताओं को स्वर्ग से बाहर निकाल दिया। देवताओं ने भगवान् विष्णु से जाकर प्रार्थना की कि वे उनकी रक्षा करें। अति क्रोधवश विष्णु के मुख से एक तेज निकला जो घनीभूत होकर महा तेज बन गया। वह तेज एक नारी के रूप में प्रकट होकर तीनों लोकों को प्रकाशित करने लगा। ब्रह्मादि समस्त देवताओं ने उन्हें अपने - अपने शस्त्रास्त्र और आभूषण देकर युद्धार्थ ससम्मान सुसज्जित किया। देवी माँ ने उच्च अट्टहास पूर्वक बार-बार गर्जना की। संसार में हलचल मच गई। समुद्र कांपने लगे। युद्ध आरंभ हो गया। देवी ने क्रोध वश दैत्यों के शस्त्रास्त्र काट डाले। देवता और ऋषि माँ की स्तुति करने लगे। देवी की शक्ति से हजारों गण प्रकट हो गए जो देवी की विजय के बाजे बजाने लगे। देत्यों के संहार से खून की नदियां बहने लगीं। माँ ने महिष (अहंकारी) असुर का वध कर दिया। देवताओं ने आकाश से पुष्प वर्षा की। यही अठारह भुजाओं वाली महालक्ष्मी या तारा कहलाईं।

तारा माँ के प्राकट्य का एक प्रसंग और भी है। भगवान् शिव के समझाने पर भी सती माता अपने पिता द्वारा आयोजित यज्ञ में जाने को आतुर हो गई। शिवजी के मना करने पर उन्होंने क्रोधवश भयंकर रूप धारण किया। उनकी घोर गर्जना और अट्टहास से भयभीत शिव दसों दिशाओं में भागने लगे। जिस भी दिशा में जाते उसी दिशा में सती का एक अलग ही रूप नजर आता। वे दश रूप दश महाविद्याएं कहलाईं। उन्हीं में से दूसरी महाविद्या तारा माँ है। इनका नाम द्वितीया भी है। इनमें से एक की भी उपासना से जीवन के मूलभूत चारों पुरुषार्थ (आवश्यकताएं) प्राप्त होते हैं।

अविद्या (केवल भौतिकवाद) की उपासना करने वाले को तारा माँ मोह (आसक्ति) में डाल देती हैं। जीवन की पूर्णता (अद्वैत की अनुभूति) के लिए विद्या (अध्यात्म) और अविद्या (संसार) दोनों को साथ लेना जरूरी है। तारा माँ के दोनों पांव शव (भोतिकवाद) पर हैं। कहा जाता है कि विद्याओं में तारा या महालक्ष्मी प्रधान हैं। माँ तारा का कहना है – 'मैं संसार में एक ही हूँ। नाना रूप धारण करती हूँ। प्रपंचपूर्वक अनेक भावों में स्थित हूँ। संपूर्ण भूतों में मेरा प्रवेश है। समस्त देवता अपना अपना काम मेरे प्रयोजन के लिए ही करते हैं। अन्न खाने वाला मेरी शक्ति से ही अन्न खाता है। समस्त कार्य मेरी सामर्थ्य से पूरे होते हैं। मेरे इस रूप को न जानने वाला हीन (कमजोर) दशा को प्राप्त होता है। मैं अपने चाहे व्यक्ति को शक्तिशाली और प्रतिभाशाली बना देती हूँ। मैं ब्रह्म (ईश्वरीय नियम) से द्वेष करने वाले हिंसक असुरों पर रुद्र का धनुष (मृत्यु) तानती हूँ। अपने शरणागत को शत्रुओं से बचाती हूँ। अंतर्यामी रूप में पृथ्वी और आकाश में व्याप्त रहती हूँ। अपनी इच्छा से अपने काम में प्रवृत्त होती हूँ। पृथ्वी और आकाश से परे होने पर भी स्वेच्छा से ऐसा करती रहती हूँ।

दक्ष (ईश्वरीय नियम विरोधी) यज्ञ में सती जी द्वारा प्राण त्यागने पर शिवजी ने मोहवश (लीला से) उनकी मृत देह को कंधों पर उठाया और विक्षिप्त होकर तीनों लोकों में घूमने लगे। देवता इससे भयभीत होने लगे। वे अनिष्ट की आशंका को दूर करने के लिए विष्णु जी की शरण में पहुंचे। सती देह के 51 टुकड़े किए गए। उस समय सती माँ के कटे अंग जहां जहां गिरे वहां इक्यावन शक्तिपीठों की स्थापना हुई। शिव जी ने स्वयं देवताओं से कहा कि इन शक्तिपीठों पर जगदंबा माँ स्वयं निवास करेंगी तथा अपने उपासकों पर कृपा करेंगी। भगवती तारा का मूल पीठ किष्कंधा माना गया है। वस्तुतः माँ तो अन्यत्र भी सर्वत्र रहती हैं। अन्य शक्तिपीठ (समीप में) ज्वाला जी, जालंधर और गायत्री (पुष्कर) प्रसिद्ध माने गऐ हैं। नगर कोट (कांगड़ा) में सती का धड़ गिरा था।

कलियुग में माँ की उपासना का फल शीघ्र मिलता है। देवी कवच का पाठ सुरक्षा और पूर्ण सुख देता है। दुर्गा सप्तशती एक सिद्धिदायक सिद्ध ग्रंथ है। इसके तीन चरित्रों में तेरह अध्याय हैं। मंत्रोच्चारण शरीर और मन को पवित्र करता है। आत्मा को नयी ताकत मिलती है। इसके पाठ से दिव्य प्रकाश और शक्तिपुंज उत्पन्न होता है जिससे जीवन की समस्त बाधाएं शांत हो जाती हैं। सप्तशती के छठवें अध्याय के पाठ से समस्त कामनाएं पूरी हो जाती हैं। जहां समस्त औषधियां निष्फल हो जाती हैं वहां भगवती का नाम चमत्कार करता है।

करोतु सा नः शुभ हेतुरीश्वरी। शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।।

मंत्र का उच्चारण सभी मनोरथों का पूरक है। इससे रोग प्रतिरोधक सामर्थ्य प्राप्त होती है। उपासना में नियमों के साथ समर्पण भाव की अधिक जरूरत रहती है।

तारा माँ के दुर्लभ दर्शन

जिला शिमला के प्रवेश द्वार शोघी के पास तारा देवी में तारा माँ के दिव्य दर्शन सुलभ होते हैं। यह सिद्ध शक्तिपीठ है। शोघी से 5 किलोमीटर दूर इस मन्दिर तक हमेशा बसें मिलती हैं। मन्दिर के पास माँ के द्वारपाल लांकड़ावीर के दर्शन होते हैं। मन्दिर के पीछे बटुक भैरव की मूर्ति दर्शनीय है। सन् 1987 से मन्दिर का प्रबंध कार्य प्रदेश सरकार के हाथ में है। क्योंथल (ज़ुनगा) के सेन वंशीय राजा वीर विक्रम सेन मन्दिर न्यास के संरक्षक हैं। रविवार, मंगलवार और शक्ति पर्वों पर यहाँ भंडारों (यज्ञ भोजों) का आयोजन होता रहता है। यह सेन वंशी राजाओं

की कुलदेवी है। ये लोग नदिया (बंगाल) में मुस्लिमों के आतंक के कारण वहां से भागने को मजबूर हुए थे। उनमें से रूप सेन ढाका होकर रोपड़ पहुंचे थे। संभवतः उन्हीं के नाम से रूपनगर (रोपड़) नाम पड़ा है। उनमें से गिरिसिन ने क्योंथल (जुनगा) की नींव डाली। वे अपनी कुलदेवी माँ तारा की मूर्ति भी साथ लाए थे।

इसी वंश के राजा भूपेन्द्र सेन को जंगल में शिकार खेलते हुए माँ के प्रत्यक्ष दर्शन अथवा प्रेरणा हुई थी कि वे अपने राजवंश और प्रजा की रक्षा हेतु उनके लिए पूजा स्थान का निर्माण करें। माँ की पवित्र आज्ञानुसार जुग्गर में मन्दिर बनाकर तारा माँ की प्रतिष्ठा करवाई गई। हर छठे महीने शील गांव के निवासी एकत्रित होकर कड़ाही (प्रसाद) भेंट करते हैं। एक बार माँ ने राजा को स्वप्न में प्रेरित करते हुए कहा कि वे मन्दिर का स्थान बदल दें। आज्ञानुसार वर्तमान मन्दिर की स्थापना हुई। इसके बाद महात्मा ताराधिनाथ ने वाममार्ग (हिंसापूर्ण तंत्रमार्ग) की विधि से मूर्ति की प्रतिष्ठा संपन्न करवाई। कुछ काल बाद राजा हेमेन्द्र सेन ने हिंसापूर्ण वामाचार विधि को अनुचित ठहराते हुए उसे बंद करके दक्षिण (सात्विक) मार्ग की विधि का प्रचलन करवाया।

तारा देवी में माँ कमलासन पर विराजमान हैं। उनके सामने बाईं ओर कटे सिर वाला महादैत्य महिष (परिवर्तनशील जड़ अचेतन वस्तु में अहंकार करने वाला) असुर है। दाएं भाग में माँ का आसन (शक्तिपुंज) सिंह विराजमान है। माँ अठारह भुजाओं में खड्ग, वज्र और चक्रादि उन शस्त्रास्त्रों को धारण किए हुए हैं जिन्होंने बुराई पर अच्छाई की विजय का सनातन इतिहास रचा है। नवरात्रों में माँ की छोटी बहन घनपैरी की देवी माँ को इसी मंदिर में लाया जाता है। स्थानीय तथा अन्य भक्त विशेष संकट में माँ की शरण में आकर रक्षा के लिए प्रार्थना करते हैं। माँ प्रसन्न होकर सबकी रक्षा करती हैं।

एक बार किसी विशेष परिस्थिति में क्योंथल का राजकार्य रानी के कंधों पर आ पड़ा था। परिस्थिति का लाभ उठाकर राजा सिरमौर ने राज्य पर आक्रमण कर दिया। रानी ने माँ की विशेष कृपा (मनोबल) प्राप्त कर आक्रमणकारी को धूल चटा दी थी। इसी रियासत को माँ ने एक बार महामारी के आक्रमण से बचाया था। सन् 1970 में माँ की मूर्ति चुराने वाले चोर को रास्ता दिखना ही बंद हो गया था जिससे वह मूर्ति को झाड़ी में फेंककर भाग निकला। इसके बाद मूर्ति की दोबारा प्रतिष्ठा राजा हितेन्द्र सेन ने बघाट के परमशाक्त विद्वान राजा दुर्गा सिंह की अध्यक्षता में संपन्न् करवाई थी।

राजा दुर्गा सिंह का शाक्त जीवन

राजा दुर्गा सिंह राजा भोज के वंशज थे। इसी वंश को सूर्य, रघु, परमार और पंवर कहते हैं। राजा भगीरथ, रघु, रामचंद्र, विक्रमादित्य और हरिश्चंद्र आदि ने इसी वंश का नाम रोशन किया था। रियासत के अंतिम राजा दुर्गा सिंह के पिता राजा दिलीप थे और माँ कोटी रियासत वाली रानी। इनकी रानी का नाम शशि प्रभा था जो कि टिहरी नरेश की पुत्री थी। इनके कोई संतान नहीं हुई और कम उम्र में ही विधुर हो गए।

राजा दुर्गा सिंह ने अपना विधुर जीवन विधवा जीवन की तरह नियमपूर्वक बिताया। आजीवन एक पत्नी व्रत रहकर माँ जगदंबा की आराधना (शाक्त जीवन शैली) अपनाई। इन्हें अपनी शाक्त गुरु माँ आनंदमयी से दीक्षा प्राप्त हुई थी। इन्होंने सांसारिक इच्छाओं का त्याग कर दिया था। इनको शाक्क जीवन की प्रेरणा राजमाता तारिणी से प्राप्त हुई थी। उन्हीं के नाम पर संस्कृत महाविद्यालय की नींव रखी गयी। इनके भगवान् को प्राप्त करने के प्रयासों को देखकर

माँ आनंदमयी इन्हें योगी भाई के नाम से संबोधित करती थीं। इन्होंने अपने देवताओं के से (श्रेष्ठ) आचरणों से अपने आसुरी (बुरे) आचरणों पर विजय पा ली थी।

उस काल के अन्य राजाओं के विलासिता भरे जीवन से अप्रभावित रहकर एक पत्नी व्रत अपनाया। अपनी रानी से भी उचित सलाह लेना न भूलते थे। राजदरबार के शाक्त (आध्यात्मिक) वातावरण में श्री सत्यव्रत (मुद्रक) आदि अनेक विद्वान् प्रभावित हुए।

राजा साहब की नित्य संध्या में महाकाली की पूजा और दुर्गा सप्तशती सहित देवी भागवत पुराण का पाठ शामिल था। नृसिंह मन्दिर में जाकर दुर्गा माता को भी नित्य प्रणाम करते थे। इन्होंने कई बार वर्णलक्षगायत्री के अनुष्ठान करवाए थे। कन्या विवाह के लिए गरीबों को सहायता राशि देते थे। तत्कालीन स्त्रियों के पुनर्विवाह की प्रथा को लोगों को समझा-बुझाकर बंद करवाया था। अपनी रानी साहिबा के नाम पर आनंदमयी माँ के आश्रम निर्माण हेतु जगह दी थी तथा देवठी में काली माता के मन्दिर की प्रतिष्ठा भी की थी। राजकुलेष्ट देवता नृसिंह का मन्दिर बनवाकर राधा कृष्ण और महिषासुरमर्दिनी (तारा माँ या महालक्ष्मी) की प्रतिष्ठा भी करवाई थी। महामहोपाध्याय पं0 मथुराप्रसाद दीक्षित को भी माँ आनंदमयी के अलौकिक रूप और प्रभाव के दर्शन हुए थे। पं० जी को माँ की समाधि अवस्था से प्राप्त आठ श्लोकों का अर्थ जानने के लिए माँ की ही शरण लेनी पड़ी थी। सपने में उन्हें माँ से ही एतदर्थ बीजकोश का सहारा लेने की प्रेरणा मिली। माँ की शक्ति का उन्हें तब जाकर पूरा भरोसा हुआ जब उनके अपने जीवन की तीन महत्त्वकांक्षाएं पूरी हुई। उनमें से एक यह भी थी कि उन्हें महामहोपाध्याय की उपाधि मिल जाए तो माँ की शक्ति पर विश्वास करूं। ब्रिटिश साम्राज्य का विरोध करते हुए इस विशिष्ट उपलब्धि की आशा करना आकाश में कमल के उगने की आशा करना जैसा था, फिर भी यह पूरी हुई थी।

माँ आनंदमयी सबके आंतरिक भावों को जान लेती थीं। वे राजा को उनके लक्षणानुसार ही योगी भाई कहती थीं। सोलन में पहली बार सन् 1946 में दुर्गा पूजा महोत्सव का आयोजन किया गया था। मूर्ति का प्रवाह साधुपुल के पास अश्णी नदी में किया गया था। उस जमाने में आनंदमयी माँ संघ की स्थापना करके उसका प्रधान कार्यालय भदेनी (बनारस) में रखा गया। राजा दुर्गा सिंह सर्वसम्मति से इसके प्रधान चुने गए। इस संघ ने आदि शंकराचार्य के अद्वैत मत का पुनरुद्धार किया। इसमें संयम महाव्रत के आधार पर 'संयम सप्ताह' के महानुष्ठान का नियम बना। दस मई 1955 को माँ का जन्मोत्सव मनाया गया। संघ द्वारा 'आनंद वार्ता' पत्रिका की नींव रखी गयी। उपनिषदों के आधार पर मातृमहत्ता का स्वरूप निम्न मंत्र में है।:-

सर्वतातमयी माता सर्वं मातृमयं जगत्। सर्वपूज्यमयी माता सर्वं मातृमयं जगत्।।

निम्नांकित मंत्र से गुरु माता की प्रार्थना की जाती थी -

भवतापविनाशिन्यै आनंदधानमूर्तये। ज्ञानभक्तिप्रदायिन्यै मातस्तुभ्यं नमो नमः।।

स्व 0 श्री चंद्र दत्त जोशी (शास्त्री) की संस्कृत महाविद्यालय में नियुक्ति (सहायक अध्यापक) हेतु राजा ने स्वयं उनसे साक्षात्कार (इंटरव्यू) लेते समय तत्काल स्वरचित मातृस्तुति परक श्लोक सुनाने को कहा था। इसमें वे सफल भी रहे थे। यह भी उनके शक्ति प्रेम का एक उदाहरण है।

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

मां आनंदमयी राम, कृष्ण और दुर्गा की प्रकाश रूपा थीं। वे किसी को मंत्रदान नहीं करती थीं। भक्त को उसके अपने इष्ट मंत्र के जाप में ही नियोजित कर देती थीं। एक ही महा माँ सारे संसार में और मूर्तियों में विराजमान हैं। वे ही शासकों की आभा (तेजोमंडल) में सुशोभित होती हैं। माँ के दरबार में सनातन शाक्त परंपराओं के दर्शन सुलभ होते थे। एक ही परमात्मशक्ति कण-कण में विराजमान है। संयम सप्ताह की सार भावना 'समस्त जीव सुखी रहें' में निहित थी। इस प्रकार न केवल राजा दुर्गा सिंह अपितु उनकी प्रजा भी 'शाक्त जीवन शैली' की उक्ति का अनुपालन करती थी। काश कि आजकल के भारतीय शासक (निर्वाचित सरकारें) भी उनकी जीवनशैली का अनुसरण करती जिससे भारत राष्ट्र का उद्धार होता।

राजा साहब जनसामान्य के हित के प्रबल पक्षधर थे। शास्त्रानुसारी निर्णय के आधार पर वे बड़े जन्माष्टमी और शिवरात्रि को वे केवल एक दिन-रात का व्रत लेने को कहते थे, भले ही उस समय व्रत खोलने की तिथि न लगी हो। इसी तरह वर्षफल निकलवाने के बावजूद भी वे जन्म के प्रविष्टे पर ही जन्मदिन पूजन करवाने को कहते थे। ब्राह्मणों को बड़ी श्रद्धा से जिमाते थे।

सर्वमंगलमांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके। शरण्ये त्रयम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते।।

भाग – 3; बघाटी जन-जीवन में अध्यात्म विज्ञान

आत्मानुभव का व्यवहार में प्रयोग

प्रस्तुत तीसरे भाग में क्षेत्रवासियों के द्वारा अपने जीवन व्यवहार में उतारे गए शक्ति प्रेम को दर्शाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

ॐ का उच्चारण मनुष्य की समस्त कामनाओं का पूरक है। यही परमानंद प्रदान करता है| यह मंत्र मनन या विचार करने से मनुष्य का त्राण या बचाव करता है। मंत्र शास्त्रोक्त और गुरु के द्वारा उपदिष्ट होना चाहिए। गायत्री मंत्र एक ऐसा ही मंत्र है। मंत्र के अर्थ के ज्ञान से उसमें श्रद्धा बढ़ती है। ॐ क्षेत्रीय लोगों की सांस में बसा है। वे इस ध्वनि के अर्थ (भगवान्) को परम उपास्य मानते हैं।

स्थूल शरीर भोजन से विकसित होता है। सूक्ष्म शरीर (अंतःकरण) प्राणायाम से और कारण शरीर (चेतना) शुभ विचारों से विकसित होती है। तमोगुणी भोजन और जीवन से मन तामसी (अज्ञानांधकारमय) हो जाता है। अज्ञानांधकारमय मन में मोह (ममता) पैदा होता है। भौतिक वस्तुओं के प्रति मोह या ममता का नाश ही मोक्ष कहलाता है।

संसार की रचना आठ प्रकार की प्रकृति से हुई है। ये आठ प्रकार हैं - प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, पांच भूत (पृथिवी आदि)। परमात्मा ने इन्हीं आठ प्रकार की प्रकृतियों से चौरासी लाख प्रकार की योनियां (जीव) रची हैं। ये जीव परमात्मा के खिलोने हैं क्योंकि अकेले परमात्मा का मन नहीं रम रहा था। जीव रचना के बाद उनमें गति का संचार किया।

इस पृथिवी पर चार प्रकार के जीवों की रचना की गई। पहले प्रकार में मिट्टी से पैदा होने वाले वृक्षादि उद्भिज कहलाते हैं। दूसरे प्रकार में पक्षी आदि अंडज कहलाते हैं। तीसरे प्रकार के पसीने से पैदा होने वाले जूं आदि स्वेदज कहलाते हैं। चौथे प्रकार में जेर से उत्पन्न मनुष्य और पशु आदि जरायुज कहलाते हैं।

भगवान् शिव महाकालरूप हैं। उन्हीं से मिनट, घंटे, दिन और वर्ष पैदा हुए हैं। वे ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र रूप लेकर क्रमश: संसार को रचते, पालते और अपने में लीन करते हैं। शंखध्वनि शब्दब्रह्म का विस्तार करती है। सुदर्शन चक्र अहंकारियों के मस्तकों (कुचक्रों या षड्यंत्रों) को काटकर उदारता या परोपकार वृत्ति का विस्तार करता है। गदा हिंसा की प्रवृत्ति का दमन करती है। कमल कीचड़ (बुरी प्रवृत्तियों) में भी अनासक्त (अछूता) रहने का तरीका सिखाता है।

शिवलिंग विश्व का कारण (बीज या पिता) है। शिववाहन बैल प्रदूषणमुक्त अन््नोत्पादन हेतु प्रेरित करता है। मंदिर की घंटाध्वनि हमारे जोड़ दर्द में रुके खून को संचारित (प्रकंपन द्वारा) करने में मदद करती है। भगवान् राम सबको भोजन करवाने के बाद स्वयं भोजन करते थे। राजा दशरथ ने रघुवंश की सनातन मर्यादाओं की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि दी। महापंडित रावण का पांडित्य केवल परोपदेशार्थ था। उसका अपना आचरण उससे भिन्न अमर्यादित और अहंकारपूर्ण होता था।

भगवान् कृष्ण ने गायों के दूध की वृद्धि के द्वारा संसार में एक उत्तम पोषाहार के उत्पादन की मर्यादा स्थापित की, यहां तक कि ग्रामीण गोपालकों की रक्षा के लिए कंसवाद (कंचन-कामिनी की दासता) का सर्वनाश किया। हलधर बलराम ने जैविक कृषि उद्योग की परंपरा का रक्षण किया। अर्जुन ने कृष्ण (परमात्मा) से मिलकर अधर्म (स्वार्थवृत्ति)

का नाश किया। दुर्योधन लोगों से उनकी पशुवृत्ति को पोषित करके धनसंग्रह करता था। शकुनि भाईयों के बीच ऐसे कारणों की खोज में रहता था जिससे उनमें लड़ाई पैदा हो और वह दूर से तमाशा देख सके।

हिरण्य कशिपु हिरण्य (सोना या धन) का दास था। घरेलू कृषि उद्योग (चरखा - चक्की आदि) संसार के पोषक हैं। बड़े उद्योगों से शोषण, कुपोषण और बेरोजगारी पैदा होती है। समुद्र के खारे पानी को मीठा बनाने की योजना का मतलब है उसकी स्वाभाविक वर्षाकारकता पर आघात करना। नशा निशा में (अंधकार या छिपकर) करने का मतलब है, निशाचर (राक्षस) बनना। सबके अंदर निवास करने वाले आत्मा का अनुभव करने से उदारता या परोपकार की वृत्ति पैदा होती है। परोपकार करते हुए जीना ही धर्म है।

मदिरा या मद्य उसे कहते हैं जो बुद्धि में विकार (खोट) पैदा करे। अन्न जितना प्राकृतिक (कम से कम पकाया गया) होगा स्वास्थ्य उतना ठीक रहेगा। इच्छाओं की दासता करने का मतलब है क्रोधादि अनेक दोषों को निमंत्रण देना। अपनी इच्छाओं की अपेक्षा दूसरों की शुभ इच्छाओं की पूर्ति हेतु प्रयत्न करने से परोपकार वृत्ति पैदा होती है।

आकाश को स्वच्छ (शोरमुक्त) रखने से हमारे बोलने और सुनने की शक्ति बढ़ेगी। वायु की निर्मलता (प्रदूषण रहित) शरीर की शक्ति को बढ़ाती है। निर्मल ताप (अग्नि) देखने और चलने में सहायक है।

केवल मंत्रोच्चारण से ही मूर्तियां प्रसन्न नहीं होती बल्कि मन्दिर से जुड़ी कोई भी मदद भगवान् को प्रसन्न करती है। डर के कारण की गई मदद तमोगुणी अर्थात् हानिकारक होती है। लाभ के लोभ में की गई मदद रजोगुणी अथवा दुःखदायक होती है। सर्वजीवकल्याणार्थ की गई मदद सत्वगुणी अथवा सुख संपत्तिदायक होती है।

देवताओं के द्वारा किए गए यज्ञ और उपकार आदि कार्यों से हमारा (मानव सभ्यता का) विकास हुआ। इस परम्परा को जारी रखकर हम देवताओं के कर्ज से छुटकारा पा सकते हैं। वेदों की रचना, अध्ययन और उपकार द्वारा ही हम आगे बढ़ने में सफल हुए हैं, उनका कर्जा हम इस परम्परा का आदर करके निभा सकते हैं। माता और पिताओं ने हमें जिस समर्पण भावना से पाला पोसा है उस कर्ज को हम उनकी जीवितावस्था में सेवा करके और उपरान्त श्राद्ध द्वारा चुका सकते हैं।

ब्राह्मण का कर्तव्य राष्ट्र के अज्ञान का निवारण करना है। क्षत्रिय भ्रष्टाचार पर टूट पड़ें। वैश्य अनाजादि के व्यवसाय से देश का पोषण करें। शेष बचे लोग उपयुक्त कार्यों को निपटाने में उनकी यथाशक्ति सहायता करें।

गुरु ऐसा हो जिसको ब्रह्म या परमात्मा का स्वयं अनुभव हो। अपने आप को खो देने पर ही परमात्मा मिलता है। परमात्मा हर दिल की धड़कन में बसा है। कहीं वह मोरों के नाच में दिखाई देता है तो कहीं नदियों की पवित्र कल-कल में। जहां भी नजर जाती है वहीं दिखाई देता है। मन केवल आत्मा के अनुभव से भरता है। परमात्मा को जानने की विधि का नाम ही धर्म है।

सारा संसार एक ही परिवार है। दूसरे की वस्तु पर लालच भरी नजर न करने की हमारी महान् परम्परा है। विद्या उसे कहते हैं जो हमें मोह या आसक्ति से छुटकारा दिलाए। ब्रह्मविद्या या परमात्मा का ज्ञान हमें आत्मा का साक्षात् दर्शन करवाता है। रामराज्य उसे कहते हैं जहाँ हर आदमी के लिए रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था हो। छोटे घरेलू उद्योग ही सबको रोजगार दे सकते हैं। हमारी की भारत माँ अन्नपूर्णा माता है जो हर मौसम में कुछ न कुछ उपज हमें देती रहती है |

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

गोपियों का चीरहरण खुले आम नंगे होकर स्नानादि करने की सजा है। गोवर्धन पर्वत हमारी गोवंश की वृद्धि का प्रतीक है। बलराम बैलों द्वारा उत्तम जैविक खेती के संदेशवाहक हैं। कंस का विनाश रक्षक से भक्षक बन जाने के कारण हुआ। योग पहले से प्राप्त (परमात्मा) की अनुभूति का नाम है।

योग से मनुष्य की सोई हुई शक्तियां जागती हैं। कोमल आसनों तथा प्राणायाम से शरीर में रुके हुए खून को गति मिलती है। पीड़ाएं और रोग दूर होते हैं। अन्न से शरीर का निर्माण, योग से अंतकरण (मन) का विकास और सद्ज्ञान से आत्मा में निर्मलता आती है।

नारी साक्षात् नारायणी (महाशक्ति) है। भगवान् नुसिंह का मतलब है मनुष्य के अंदर सिंहत्व (पौरूष) का जागना। पत्नी मनुष्य की सर्वोत्तम मित्र (सहयोगिनी) है। वेदों में वर्णित कर्म, भक्ति और ज्ञान द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार होता है। एक अच्छा शिष्य श्रेष्ठ गुरु बनकर सबका उपकार करता है|

अमर भाषा संस्कृत के अध्ययन से मृत्यु (अहंकार) पर विजय प्राप्त होती है। संस्कृत का हर शब्द अपने आप में अमृत का कलश है। वह शेरनी का दूध है। भारत की विश्व में प्रतिष्ठा के दो ही कारण हैं - पहली संस्कृत भाषा और दूसरा संस्कृत भाषा से आचरण में लाया गया व्यवहार।

हमें अपने आत्मा पर जितना विश्वास होता है हमारी आत्मशक्ति उतनी ही बढ़ती है। अहंकार कुंठा है, कुंठा के त्याग से वैकुंठ (स्वर्ग) या सुख मिलता है। वेदों का संदेश है कि हम मृत्यु (तंगदिली) से जीवन (दरियादिली) की ओर गतिशील हों। साधु (सज्जन) कभी जमात (भेड़ों के झुंड) में नहीं चलता। प्रसव पीड़ा (कठोर परिश्रम) में से गुजरकर ही आत्म प्रकाश की किरणों की झलक मिलती है। आत्मविकास के मार्ग में यात्री अपना कुछ न कुछ खोता हुआ चलता है। परिश्रम प्रतिभा पर सदा भारी पड़ता है।

प्रेम कुछ पाने का नहीं, देने का नाम है। आत्मा को जीवित रहने के लिए अनिवार्य मात्रा में संसार भी चाहिए। जो मनुष्य परमात्मा रूप धुरी या कील से जुड़ा रहता है उसका कभी कोई नुकसान नहीं होता। मनुष्य मात्र हमारा भाई है। मनुष्य मात्र में श्रद्धा रखना उनके प्रति कृतज्ञता है। हम केवल स्व (अपने) के लिए नहीं बल्कि सर्व (सबके) के लिए जिएँ| हम अपने चारों ओर के विरोधों की भरमार में से अपने समर्थन की खोज करें। हमारे जीवन की सादगी में सत्य (सर्वजीवहित) और अहिंसा ओत - प्रोत हैं। अपनी आवश्यकता से अधिक की सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह, ममता और आसक्ति ही महिष (भैंस या मोटी बुद्धि) और महिषासुर है जो शूलिनी या तारा माता (महालक्ष्मी) के त्रिशूल (दैहिक, दैविक और भौतिक ताप) से कभी भी कहीं भी मारा जा सकता है।

वृक्ष (भगवान् नीलकंठ) विष (कार्बन) पीकर अमृत (ऑक्सीजन) दान करते हैं। हम कड़वे सच को भी मीठे शब्दों में व्यक्त करें। हम अपने सहयोगी या पड़ोसी की विपत्ति में यथाशक्ति सहायता करें। सब कुछ जरूरतमंदों में बांट देने पर भी हमारा सर्वशक्तिसंपन्न आत्मा सदा शेष बना रहता है। हम अपने संचित ज्ञान को अपने जीवन व्यवहार में ढालें।

हमारी हर सुबह एक सुनहरा अवसर लेकर आती है। भगवती प्रकृति (सहज स्वभाव) स्वयं हमारी समस्याओं और रोगों के निवारण में सक्षम है। हमें सन्मार्ग पर भागने की नहीं, समय पर निकलने की जरूरत है। हमारे ज्ञान का मूल्य सदा हमारे प्राप्तांकों से ऊपर होता है। हमारी सक्रियता ही हमारे स्वास्थ्य की रक्षक है। हमारे अपने हिस्से का काम ही हमें जीवन में ऊंचा उठाता है।

वीर्य के एक कण के अंदर पूरा शरीर समाहित होता है। अतः वीर्य की रक्षा शरीर की रक्षा है। जीवन-साथी (धर्मपत्नी) को केवल प्रेम से जीता जा सकता है। पुरुषार्थ या मेहनत सदा आदरणीय होते हैं। बाधाएं हमारी सफलता की सीढ़ियां हैं। जीवन केवल सार्थक क्षणों का नाम है। वासना या आसक्ति से परमात्मीय प्रकाश की किरणें हम से दूर हो जाती हैं। अपने मन से पार निकल जाने का नाम ही योग या ईश्वर मिलन है। मन महिषासुर है। महाशक्ति (आत्मा) द्वारा इसका मारा जाना जरूरी है तभी सनातन आनंद का लाभ संभव है। एकमात्र सांस (वायु) से सारा संसार जीवित है। इसी सांस के कारण सारे संसार के जीव अजीव एकरूप (जगदीश) हैं। हमारी एक सांस एक भी है और अनेक भी है।

मानवीय गुणवर्धक संस्कार विज्ञान

बालक के दूसरे जन्म (संस्कारित) को ब्रह्मजन्म कहते हैं। अर्थात् उसमें परमात्मशक्ति प्रकट होने लगती है। यज्ञोपवीत दर्शाता है कि अमुक का ब्रह्मजन्म हो चुका है। इस जन्म को देने वाला बीज या पिता आचार्य कहलाता है। वही उसमें ज्ञानरूप बीज का प्रवेश करवाता है। उस बालक में आचार्य की आत्मा प्रवेश कर जाती है। इससे वह मंत्र दीक्षा देने वाले आचार्य का आत्मज (आत्मा से पैदा हुआ) कहलाता है। पहले वह आत्मज (पुत्र) तो जन्मदाता का भी था परन्तु उसमें आत्मज्ञान का प्रवेश नहीं था। यह आत्मज्ञानदान की परंपरा अनादिकाल से चली आ रही है।

बालक को परमात्मा की निकटता प्रदान करवाने के लिए उसको दूसरा पिता (आचार्य) दिया जाता है। इसी कारण यह ब्रह्म जन्म है। यह बालक वेदमाता गायत्री के गर्भ में पलता है। गायत्री मंत्र वेदों का सार होने से उसमें समस्त ज्ञान - विज्ञान समाए हुए हैं। यज्ञोपवीत संस्कार से संस्कारित बालक गुरुपुत्र या गायत्री पुत्र कहलाता है। आचार्य बालक के अंदर एक ऐसी माँ की स्थापना करता है जो उसे सर्वांगपूर्ण पोषण प्रदान करती है। वह माँ उसे दुनिया के समस्त सुख तो प्रदान करती ही है उसके साथ उसे मोहासक्ति से बचाते हुए परमानंद की अनुभूति का अवसर भी देती है। पहले जन्म के पिता से उसकी वंशवृद्धि तथा दूसरे जन्म के पिता से उसका वंश या गोत्र बढ़ता है। हर गोत्र का अपना एक ऋषि है। हम में से प्रत्येक आदमी अपने अपने अलग- अलग गोत्र, ऋषि, विद्यावंश और वेदशाखा से संबद्ध है। प्रत्येक आचार्य अपनी शाखा के नियमानुसार मंत्र का आधान करता है। वह नियमानुसार बालक को एक मानसिक गर्भ प्रदान करता है। परंपरानुसार अज्ञान के अंधकार को मिटाने के लिए ब्राह्मण का, अन्याय को मिटाने के लिए क्षत्रिय का और अन्न अभाव को मिटाने के लिए वैश्य आदि का यज्ञोपवीत संस्कार किया जाता है।

आध्यात्मिक जीवन विज्ञान

मनुष्य को चाहिए कि वह पुरानी आदतों या केंचुली को सर्पवत् छोड़ता रहे अन्यथा उसका विकास रुक जाता है। इंद्रियों की अधीनता (गुलामी) का नाम आसुरी वृत्ति है। इस वृत्ति को हमारी प्राण शक्ति जीत सकती है। प्राण शक्त्ति हमें दानवता से ऊपर उठाने का प्रयास करती है। वृहदारण्यकोपनिषद् के अनुसार मृत्यु (तंगदिली) हमसे दूर भागती है। भगवान् कृष्ण कहते हैं कि तू मेरी कार्य योजना का हिस्सा बन जा, मैं तेरे जीवन को खुद संभालूंगा। योग अर्थात् भगवान् के लिए काम करने से शरीर लचीला, संतुलित और शक्ति संपन्न बनता है। हमें अपने व्यक्तिगत विचार को ईश्वरीय विचार के साथ जोड़ना होगा, यही योग है। हम अपनी सांस लेने की ध्वनि 'सः' के साथ भगवान् को अपने अंदर बसाते हैं। सांस को बाहर निकालते समय अहं की ध्वनि के साथ अपने अहंकार रूप कार्बन को बाहर फैंकते हैं।

इस बात का अनुभव हर सांस के साथ होता रहे तो योग अपने आप सधता है। भगवान् की इच्छा अपने आप पूरी होने लगती है। उस समय हमारी और भगवान् की इच्छा एक ही हो जाती है। यही जीवन का लक्ष्य भी है।

वैदिक ज्ञान का प्रयोग पक्ष ही योग अथवा अध्यात्म शक्ति है। जीवन में अपने आप आने वाली वस्तु का स्वागत हो। हमारे परम पिता हमें कभी कोई गलत वस्तु देते ही नहीं। हमें कुछ गलत लग सकता है पर वह गलत होता नहीं। जीते जी अहं का त्याग तो दुष्कर है पर अहं का परम अहं (परमात्मा) में विलय करना सरल है। हमारा अहंकार उसका अहंकार बन जाए तो बात ही क्या। सब सिद्ध हो गया। भगवान् का नाम लेने से शरीर के परमाणुओं में जो कंपन होता है उससे मृत कोशिकाएं (सैल) पुनः जीवित हो जाती हैं।

भगवान का नाम स्मरण हमें परिणाम की चिंता किए बगैर धर्म की रक्षा करने हेतु प्रयास करने की प्रेरणा देता है। मंत्रों की पवित्र ध्वनियां शरीर के ऊर्जा केन्द्रों को आपस में जोड़े रखती हैं, यह जुड़ाव ही योग है।

हर इन्सान के अंदर दो-दो तत्त्व मिश्रित हैं। स्त्री - पुरुष, अंधेरा - उजाला और ठण्डा-गर्म आदि। इनके संतुलन से ही परमात्म प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। हमारे यहां उपासना के लिए जो संध्या काल रखा गया है वह वास्तव में मध्य या संतुलन का समय ही है। अति निष्क्रियता से आलस्य, निराशा और रोग पैदा होते हैं। अति सक्रियता से गुस्सा और तनाव या टेंशन जन्य रोग पैदा होते हैं। आत्मिक ऊर्जा हम तक परमेश्वर से होकर आती हैं। आत्मोर्जा से मन पर जमी धूल साफ होती है। मन का शीशा साफ हो जाए तो नज़रिया साफ हो जाता है। समस्त दृश्य सुंदर नजर आने लगते हैं।

आध्यात्मिक यात्रा की सात मंजिलों को लगभग सभी महापुरुष मानते हैं। इसकी छः मंजिलों में से क्रमशः सांसारिक इच्छाएं, शारीरिक इच्छाएं, आत्मप्रसन्नता, प्रेम, आत्माभिव्यक्ति, विवेक और परोपकार की प्रेरणा आते हैं। यह यात्रा एक आध्यात्मिक विवाह है| सातवीं मंजिल शाश्वत है। विवाह की सप्तपदी में भी सातवां दीपक अनबुझा (नित्यप्रकाशमान) ही रखा जाता है।

हमारे आत्मा के ऊपर अपवित्र अहंकार (वासना) का पर्दा पड़ा है। आत्मा पवित्र अहंकार है। मंत्र शक्ति अपवित्र अहंकार (स्वार्थ या वासना) को नष्ट करती है। मूर्ति पूजा हमारे मनों को एकाग्र करती है। मंत्र भी एक सूक्ष्मशक्तियुक्त लघुमूर्ति है। एकाग्र मन में ही संसार की सभी सफलताएं निहित होती हैं। गुरु हमारे कान में ज्ञानामृत के सिंचन से शास्त्रों के रहस्यों को जानने हेतु प्रवृत्त करता है। भगवान वेद व्यास संसार मात्र के गुरु हैं। वे ही गोविंद (परमात्मा) के दर्शन करवाने में समर्थ हैं। मंत्र हमें आत्मा के प्रकाश (ज्ञान) का दर्शन करवाता है। गुरुपूर्णिमा के दिन आध्यात्मिक गुरु तत्त्व जागा हुआ रहता है। उस दिन गुरुपूजन या स्मरण से हमारे जीवन का आध्यात्मिक विकास होता है।

रोगनाश हेतु तीन नाम हमेशा याद रखने चाहिए। पहला अच्युत अर्थात् जो अपने सर्वोपकार रूप कर्त्तव्य से नहीं चूकता। दूसरा आनंद अर्थात् जो हर परिस्थिति में प्रसन्न रहता है और तीसरा गोविंद अर्थात् साक्षात् परमात्मा।

जीवन को अध्यात्म से जोड़ने वाली तारा माँ

तारा माता के गूर (दिवां) पट्यूड गांव में रहते हैं। गांव का नाम संभवतः भट्ट (पट) पर आधारित है। देवताओं में देवी (शक्ति) के सम्मिलित रहने से वे अपने कार्य करने में समर्थ होते हैं। दुर्गा सप्तशती के मध्यम चरित्र को लघु सप्तशती कहा जाता है। इसके अंतर्गत अध्याय संख्या 2, 3 और 4 आते हैं। इसमें 155 मंत्र हैं। सप्तशती के पाठ में अखंड दीप जलाकर रात्रि को भूमि पर शयन करने की परम्परा है। शतचंडी यज्ञ में 10 ब्राह्मण, 10,000 नवार्णमंत्रजप और

नाम सहित नौ कन्याओं के पूजन का विधान है। क्षमायाचना का मतलब है अहंकार का विसर्जन। क्षमादान का अर्थ है किसी जीव को (आत्मा को जीने का अवसर) दान करना। तारा माँ को पशु बलिदान की जगह गुटबलि की परम्परा सन् 1916 में राजा हिमेन्द्र सेन ने डाली थी, यह महसूस करते हुए कि जिस जीव को हम सांस नहीं दे सकते उसकी सांस को छीनने का हमें कोई अधिकार नहीं है।

महाशक्ति का सौम्यरूप तारा माँ या महालक्ष्मी है जिन्होंने महिषासुर या अहंकार को मारा था। उग्र रूपा मधु कैटभ हंत्री महाकाली हैं। मिश्रितरूपा शुंभ निशुंभ हंत्री महासरस्वती हैं। ये तीनों रूप एक ही महाशक्ति के हैं।

लांकड़ा वीर भैरव रूप है। ये शिव रूप हैं तथा इन्होंने पार्वती पर मुग्ध हुए बीज अंधकासुर का वध किया था। माँ प्राकृतिक भोग पंचमेवा, ऋतुफल और दूध स्वीकार करती हैं। भगवान् शिव शक्ति (पार्वती) के संयोग से ही शक्तिमान् हैं। माँ अपनी मोहशक्ति (भ्रमरूप सुरा या शराब) से जीवों को भरमाती हैं। उनकी शरण ग्रहण करने वालों पर वे कृपा करके तथा उनका भ्रमजाल तोड़कर परमपद दिलाती हैं। उन्होंने अपना वाहन असुरों (अहंकारियों) को मारने वाला हिंसक सिंह चुना है। उनका लाल झंडा उनकी असुरों (मानवता के विरोधियों) पर विजय का प्रतीक है। माँ त्रिपुरसुंदरी के रूप में तीनों पुरों या नगरों (ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय या तन, मन और आत्मा) में सुशोभित होती हैं। उन्हें जानने वाला इनकी कृपा से महाशक्तिरूप ही हो जाता है।

सनातन जीवन धारा में अध्यात्मविज्ञान

इंद्रियों की दासता शरीर की भाषा है। पुण्य या परोपकार करने से सद्बुद्धि मिलती है। संपूर्ण विश्व आत्मतत्त्व से भरा हुआ है। दूध (परमात्मा) में आत्मा (जल) के मिलने से वह भी दूध (परमात्मा) ही हो जाता है। उस पर रोग, बुढ़ापा, मृत्यु असर नहीं करते। व्रत (केवल भोजन त्याग) से परमात्मा की शरण नहीं मिलती अपितु एक मिशन या अभियान के जरिए मिलती है।

प्रसन्नता का आनंद हमारे नजरिए की गरिमा पर निर्भर करता है। महात्मा अरविंद के अनुसार नए युग में आंतरिक शक्तियों की प्रधानता होगी, यहां तक कि कर्मकाण्ड में भी। आत्मा के दर्शन (अनुभव) केवल व्याख्यान से नहीं होते। परमात्मा केवल उद्योगी (भगवदर्थ कर्मी) का सहायक बनता है। हमारे हर दिन का सूरज हमारी आयु के एक टुकड़े को उठाकर अस्त हो जाता है। केवल निरंतर प्रयासशील रहकर आत्मशक्ति को पाया जा सकता है। विकासशील आत्मा अपने अनुकूल साधनों को अपने लिए स्वयं जुटाती चलती जाती है।

ज्ञान इंद्रियों की गति को नियंत्रित करता है। हमारे विचार हमारे आचरण या गतिविधियों के नियंत्रक हैं। सबसे प्रभावशाली विचार हमारे आत्मशक्ति से ही उपजते हैं। हमें सबसे बढ़िया सलाह हमारे अपने आत्मा (आंतरिक चेतना) से मिलती है। हमें पक्षपात रहित निष्पक्ष सत्य की तलाश में अपने आत्मा तक पहुंचना चाहिए। अपने आत्मगौरव की रक्षा सबसे बड़ा धर्म है। आत्मा सूर्य की तरह प्रकाशमान है। दुनिया के समस्त महापुरुष इसी के प्रकाश में अपने आत्मविकास का रास्ता खोजते हैं।

अध्यापन का अर्थ है मन को एक उन्नत स्तर प्रदान करवाना। प्रेम, उदारता और उत्साह आत्मा या चेतना की स्वाभाविक शक्तियाँ हैं। इन शक्तियों को जगाने में किसी विशेष वर्ग का नहीं अपितु मानव मात्र का अधिकार है। कर्म

का मतलब परमात्मा के आदेशों (नियमों) का पालन करना है। व्यक्ति ब्रह्मांड रूपी बड़े कारखाने का एक पुर्जा है। हर पुर्जे का फर्ज बनता है कि वह उस विश्वपालक कारखाने के प्रति सदा समर्पित होकर काम करे।

आत्मदेवता साधना (परिष्करण या संशोधन) का तत्काल फल देते हैं। अध्यात्मसाधना का मतलब है एक उन्नत आचरण या व्यवहार करना। आत्मशक्ति या चेतना की परवाह न करने का मतलब है धीमी आत्महत्या। मैं आत्मा सत्यरूप हूँ और केवल सत्य को ही स्वीकार करूंगा। इस नियम पर आचरण अनिवार्य है। व्यक्ति को परमात्मा ने किसी विशेष प्रयोजन (काम के लिए) पैदा किया है। उस काम को पहचाने बिना साधना नहीं हो सकती। परमात्मा के काम पर केन्द्रित जीवन चर्या सबसे प्रभावशाली साधना है। उस काम में अवश्य सफलता मिलती है। कारण कि उसमें सफलता का शत्रु (हमारा अहंकार) नष्ट हो चुका होता है।

हमारे जीवन का सबसे बडा अभिशाप है परमात्मा द्वारा सौंपे गए काम की अवहेलना करके अपनी मनमानी करना। हमारे जन्म कालीन स्थान और समय परमात्मा अपने प्रयोजन के अनुरूप ही चुनते हैं। हर रचना के पीछे उसका अपना एक विशेष उद्देश्य निहित होता है।

परमात्मा के प्रकाश या निर्देश में जीने का अपना एक अनोखा रंग और आनंद होता है। भगवान् के प्रयोजनार्थ समर्पित जीवन ऊर्जा और उमंग से भरा होता है। स्पष्ट उद्देश्य उच्च जीवन स्तर हेतु सबसे बड़ी प्रेरणा है। यह अपने आत्मा से एक प्रकार का सुखद समझौता है। परमात्मा से कुछ मांगना हो तो अपने जीवन के लिए एक सही नजरिया मांगना चाहिए। हमारी सभी समस्याओं की मां हमारी आदत है। अपने मन से काम लेना एक कला है। हमारा अहं हमारी खुशामद का भूखा होता है। परमात्मा की शक्ति (प्रकृति) हमारे अंदर प्रतिभा के रूप में अभिव्यक्त होती है।

आत्मारूप दीपक शरीर रूप मंदिर को प्रकाशित और गतिशील करता है। अध्यात्म विज्ञान जनमानस के लिए कल्याणकारी नियमों की खोज करता है। अपने पवित्र ज्ञान को कर्म में निवेशित करने से सुख - समृद्धि बढ़ती है। परमात्मा की प्रसन्नतार्थ काम करने वाला मनुष्य निस्संदेह भाग्यशाली है। अमर आदमी का मतलब है आत्म भावना से सराबोर। अर्थात् हे परमात्मा, आपका काम आपको ही सौंपता हूँ।

हमारी पावन शाक्त परम्पराएं हमें परमात्मा की ओर ले जाने वाले रास्ते रूप हैं। हमारी अपने लिए अपनी बनाई सीमाएं हमारे लिए समस्याएं हैं। अपनी अपूर्णता के प्रति सचेत रहने में ही हमारा देवत्व (मानसिक उन्नति) है। आत्मा दुनिया के सभी भेदों से ऊपर (उन्नत) है।

वास्तु या भवन निर्माण विद्या का मतलब है अपने निवास को परमात्मा के प्रवेश योग्य बनाना। अर्थात् उसमें सूर्य प्रकाश, हवा और ताप आदि परमात्म शक्तियां सरलता से प्रवेश कर सकें। अध्यात्म विद्या का मतलब है व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन को परमात्मा के प्रवेश योग्य बनाना। वासनाएं (स्वार्थपूर्ण इच्छाएं) आत्मा का आवरण (पर्दा) है। ज्योतिष की अपनी सीमाएं हैं अतः यह अपरा (संसारी) विद्या है। आत्मज्ञान या अध्यात्म कालातीत है अतः पराविद्या है। ज्योतिष (कालविज्ञान) साधन अवश्य है, साध्य नहीं। साध्य तो महाकाल या परमेश्वर ही है।

जो लोग परमात्मा के बताए मार्ग पर नहीं चलते उन्हें सन्मार्ग (ट्रैक) पर लाने के लिए आदिशक्ति (गायत्री माँ) अपने तमोगुण वाले अंश से ठोकर खाने के लिए मजबूर करती है। फिर भी न चेते तो उन्हें क्रूर और अहंकारी बनाकर अपने हाथों से कंस और रावण की तरह नष्ट कर देती है, लोक मर्यादा की रक्षा के लिए।

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

हर मंत्र का देवता यंत्र में रहता है। यंत्र की आत्मा बीजाक्षर में निहित शक्ति होती है। त्रिपुरसुन्दरी का यंत्र ब्रह्मांडाकार है। श्रीयंत्र की उपासना का मतलब है ब्रह्मांड की उपासना। अध्यात्म यात्रा का पहला और अंतिम बिंदु एक ही है। एक ही महाशक्ति की पूजा से सभी देव शक्तियां या देवता पूजित हो जाते हैं। सभी देवताओं और वस्तुओं के अंदर विद्यमान उसी एक महाशक्ति के दर्शन क्यों न किए जाएं। परमात्मशक्ति विश्व को मोहने (भ्रम में डालने वाली) है। मोह के वश में होकर वह आत्मप्रकाश को देख नहीं पाता और भ्रम को ही सत्य समझकर जन्मान्तरों तक धुरी (केन्द्र) से दूर बाहर अरों (पहियों) पर चक्कर काटा करता है|

सृष्टि के आरंभ में सबसे पहले महाशक्ति ही विद्यमान थी। उसी ने अंडाकार संसार को पैदा किया। इसी कारण सारा संसार शाक्त (शक्ति का उपासक) है। निस्संदेह कारण कार्य का ऋणी होता है। सूर्य से अलग हुए उसके खण्ड (अन्य ग्रह) सूर्य का ही चक्कर लगाते हैं। परमात्मांश उसकी आत्माएं (किरणें) भी परमात्मा (प्रकाश स्रोत) का चक्कर (उपासना) लगाना शुरु कर देती हैं। वही महाशक्ति तीन पुरों या नगरों (शरीर, मन और आत्मा) में समायी है। दुनिया का शब्द मात्र या शक्ति (पार्वती) अर्थ (शिव या परमात्मा) के सान्निध्य के लिए तरसता है। मूलाधार सहस्रार से मिलना चाहता है।

एक ही परमशक्ति ने ब्रह्मादि देवताओं को पैदा करके अपने अपने कामों में लगाया है। उसी ने वृक्ष, जीवों और मनुष्यों की उत्पत्ति और संचालन किया है। बह कोई भी आकार ग्रहण कर सकती है। जिस वस्तु के अन्दर संसार सोता है उसे शिव कहते हैं। शिव और शक्ति के चिह्नों के मेल को लिंग कहते हैं। यह बिंदु (आत्मा) और सिन्धु (परमात्मा) का मेल है। तीन मूर्तियों (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) से भी प्राचीन मूर्ति त्रिपुरा है। कण - कण के अन्दर रहने वाली शक्ति का नाम ब्रह्म या परमात्मा है। वही शक्ति परमशक्ति है। शेष सब शक्तियां उसके अंश हैं।

सारे अक्षर अकार से पैदा हुए हैं। अकार सभी अक्षरों के अंदर रहता है और अंत में अनश्वर होकर शेष बचता है। आज के जीवन पर ज्यों-ज्यों भोतिकवाद (अहंकार) सवार हो रहा है त्यों- त्यों हमारी आध्यात्मिक समझ धुंधली पड़ती जा रही है। घर-घर में किया जाने वाला कर्मकाण्ड हमारी आध्यात्मिक समझ का आधार होता था। अब कर्मकाण्ड पहले से कम और वह भी जल्दी - जल्दी निपटाया जाता है। आज जरूरत यह है कि जो भी कर्मकाण्ड किया जाए वह गणेश जी के लेखन कर्म की तरह किया जाए। गणेश जी व्यास जी का सुनाया वही श्लोक लिखते थे जो उनकी समझ में आता था, तात्पर्य यह कि समझकर लिखते थे। वही बात यजमानों को भी अपनानी चाहिए। कर्मकाण्ड करें परन्तु उसे समझकर। तभी उसका लोक और परलोक में लाभ है। बिना समझे अपनायी गई बात और कर्मकाण्ड किसी के उपयोग का नहीं हो सकता। कर्मकाण्ड को समझकर करने के बाद अध्यात्म को समझने तथा आध्यात्मिक जीवन बिताने के लिए अलग से द्रविड़ प्राणायाम (मत्थापच्ची) नहीं करना पड़ेगा।

दुनियां की हर चीज़ में माँ (परमात्मशक्ति) व्याप्त है। रामकृष्ण परमहंस कोई भी काम माँ की आज्ञा लेकर करते थे, भोजन भी। स्वामी विवेकानंद के अनुसार निष्काम भाव से जन सेवा करने में ब्रह्मणत्व (उच्चता) निहित है। सकाम कर्म में तामस शक्ति है। कण-कण में सत्व, रज और तम तीनों गुण समाए हैं।

रावण ब्रह्मशक्ति के दुरुपयोग से राक्षस से महाराक्षस लन गया था। ब्रह्मशक्ति हमारे भोजन को क्रमश: सात रस रक्ताादि धातुओं में बदल देती है। परमात्म प्राप्ति का पथ सकामता से निष्कामता की ओर जाता है। सकाम कामों को

सफल बनाने के लिए तमोगुणी तंत्र या वाम मार्ग या भैतिकवाद की जरूरत पड़ती है जिसमें खतरों की संभावनाएं भी बढ़ती जाती हैं। ठीक उसी तरह जैसे बढ़ते भौतिक विज्ञान में प्रदूषण के खतरे। अतः परंपरानुसार निष्काम कर्म या सत्वगुणमय मार्ग ही परमात्म प्राप्ति का सबसे सुरक्षित मार्ग माना गया है।

त्रिकाल संध्या का अभिप्राय है तीनों कालों की शक्तियों की उपासना। ब्रह्मा की शक्ति ब्रह्माणी की उपासना जन्मदात्री माँ का आदर, वैष्णवी शक्ति की उपासना पालनकर्त्री माँ का धन्यवाद और रूद्राणी शक्ति की उपासना मृत्युभय के निवारण के लिए की जाती है। मृत्युभय की निवृत्ति से हमारा लघु जीवन सनातन जीवन का रूप ग्रहण करता है। जन्म -मरण रूप यह संसार शक्ति की क्रीड़ा (मनोरंजन) मात्र है। वास्तव में मनुष्य न जन्मता है न मरता है। परमात्मा की इच्छा ही उसकी शक्ति की क्रीड़ा (मनोरंजन) मात्र है। परमात्मा को मनोरंजन की जरूरत पड़ी तो उन्होंने एक से दो होने की इच्छा की और वे दो हो गए। इच्छा ही उनकी शक्ति है, उसी से वे अपने लिए आवरण पैदा करके स्वयं उसमें छिप से जाते हैं। उसी आवरण के अन्दर अनंत सृष्टि पैदा करके क्रीड़ा या मनोरंजन का आनंद लेते रहते हैं। हम अनासक्त या निष्काम रहकर अपने सहज स्वभाव को जीवें।

सांसारिक रूप से होशियार संसारी आदमी जीवों और वस्तुओं में फर्क देखता है। यह भिन्नता दृष्टि ही राजा दक्ष के लिए घातक सिद्ध हुई थी। उसने शिव को व्यावहारिक संसार से अलग देखा और उन्हें कुलहीन कहा। वास्तव में सारा संसार एक ही परमात्मशक्ति का अंश है। आत्मज्ञान से रहित धर्म अंधा होता है। दक्ष अंधा धार्मिक था। आत्मज्ञान से पूर्ण दृष्टि उसके पास थी ही नहीं। आत्मज्ञान से रहित उसकी संपत्ति और यज्ञ उसके विनाश का ही कारण बन गए। ईश्वर पूजा के विधान को नहीं, श्रद्धा को देखता है।

सर्वांगीण उन्नतिदायक अमृतवचन

आशावादी ही आस्तिक है। शिष्टता सब कछ खरीद सकती है। साहस प्रधान गुण है। सबसे बढ़िया नशा किसी संगठन के माध्यम से समाज सेवा है। सबके हित की बात या काम सर्वश्रेष्ठ है। शुभ इच्छा एक उत्पादक शक्ति है। लुढ़कते पत्थर पर कभी काई नहीं जमती। प्रेम का अर्थ है निःस्वार्थ समर्पण। उन्नति की नींव हृदय की विशालता है। अनुभव जन्य ज्ञान प्रभावकारी होता है। स्वकर्मशीलता कामधेनु है। आवश्यकता प्रतिभा की प्रेरक है। आज की मेहनत कल का फल। अपने हिस्से का काम करना सर्वोत्तम उपासना है। दोष को गुण बताना चापलूसी है। प्रेम की भाषा मुस्कान है। निष्काम कर्म से भगवान् मिलते हैं। करुणामयी प्रकृति की पात्र नारी करुणामयी है। काम की अपेक्षा उसका उद्देश्य महत्त्वपूर्ण होता है। समस्या समझदारी की माँ है। कृतघ्नता सदा उपेक्षित होती है। धन का गुलाम अभागा होता है। उधार का लेना या देना वैमनस्य बढ़ाता है। कम खाने और गम खाने से स्वास्थ्य ठीक रहता है। ईर्ष्या हड्डियों को भी सुखा डालती है। पराश्रित रहना नरक है। अक्सर समझदार की तरफदारी करता है| विनम्रता स्वाभिमान से श्रेष्ठ है। शिक्षित नारी सुखी परिवार। सत्य या भगवान सदा सबके हित में रत हैं। गीता ब्रह्मविद्या या परमात्मानुभूति है। हम समाधान का हिस्सा बनें। अपनी उपलब्धि पर हम भगवान् के धन्यवादी हों। शुभ दृष्टि का आधार या द्रष्टा हमारी चेतना होती है। वृद्ध का मतलब है अनुभवसिद्ध। पूर्ण (परमात्मा) को चुनने वाला पूर्ण द्वारा चुन लिया जाता है। गंभीर परिस्थिति शांति मांगती है, तब आत्म शक्ति बढ़ेगी। जीवन का रक्षाकवच परमात्मा पर विश्वास है। गुरु आत्मविकास हेतु पथ प्रदर्शक होता है। सभ्यता आत्मा की देन है। गृहणियों का मन फूल की तरह

कोमल होता है। शरीर का सारांश शुक्र या वीर्य है। विवाह के सात पद सात लोकों (शरीरगत चक्रों) के प्रतीक हैं। परमात्मा दिगंबर और प्रकृति दिव्यांबरा हैं। शिखा पिरामिड का काम करती है। आत्मा पर पड़े पाँच पर्दे -- अन्न, प्राण, मन,विज्ञान और आनंद। 48 सर्वोत्तम वैदिक विवाह विधि --ब्राह्म। 49. विकास की गति असत्य (स्व) से सत्य (सर्व) की ओर है। 50. प्रेरणा एक महत्त्वपूर्ण उत्पाद है। 51 तमोगुण की प्रधानता अभाव (हीनता) महसूस कराती है। 52. चित्रगुप्त (यम) या प्रधान न्यायाधीश हमारे चित्त में गुप्त रूप से रहता है। 53. सोऽ हं का सो जाना परतन्त्रता और जाग जाना स्वतंत्रता है। 54. संस्कार का अर्थ है चित्त में अंकित अनुभव। 55. सोऽ हं की अनुभूति में बाधक - अतिसक्रियता या निष्क्रियता। 56. मन शांत तो शरीर शांत। 57. क्षतात् (अत्याचारात) त्रायते इति क्षत्रिय:। 58. अक्ष्यादि इंद्रियेषु गतिमान् अक्षर: (परमात्मा)। 59. परमात्मा का प्रधान वरदान - प्रतिभा (व्यक्तिगत योग्यता)। 60. विचार चेतना की किरणें हैं। 6. मंत्र -- मन को व्यवस्थित करने वाली ध्वनि। 62. मंत्र की शक्ति : उठती ध्वनि त्तरंगें। 63. आदि ध्वनि ॐ पर केन्द्रित मन विराट की ओर अग्रसर। 64. योगासन प्रकृति के विविध स्वभावों के प्रतीक हैं। 65. स्वभाव या सहजता में तनाव रहित ब्रह्मांडीय लय होती है। 66. अहम - दूसरों की स्वीकृति से ओढ़ा गया सामाजिक रूप। 67. मैं (आत्मा)= शुद्ध द्रष्टा चेतना। 68. योग= शरीर, मन और आत्मा तीनों में सामंजस्य स्थापक क्रियाएं। 69. प्रकृति के नियमों का आधार - ईश्वरेच्छा। 70. अहंकार - चेतना को ढकने वाला मल 71. हर परमाणु के अंदर परमात्मा की किरण। 72. जीव- परमात्मा द्वारा संचालित एक यंत्र। 73. सांस= परमात्मा की तरंग। 74. योगासन - जीवन में लोच पैदा करने वाले प्राकृतिक व्यायाम। 75. परमात्मा के ऊपर तीन आवरण (मल)- शरीर, मन और आत्मा। 76. हमारे शरीर के कोषों का निर्माता -- भोजन। संपूर्ण ऊर्जा और रचनात्मकता का स्रोत -- ब्रह्म। सृष्टि - ब्रह्म की इच्छाशक्ति की अभिव्यक्ति। जीवनमूल्य आत्मा के सान्निध्य से उत्पन्न। लोच (लचीलापन) यौवन है और जकड़न बुढ़ापा। व्यास परमात्मा के गुरु रूप अवतार हैं। कर्महीन भाग्यहीन होता है।

आध्यात्मिक व्यवहार में सहायक सुसंस्कृतवचन

स्वस्ति पंथानम् अनुचरेम -: हम परोपकार करते हुए जिएं। अश्मा भवतु नः तनु: - हमारा शरीर बलवान हो। स सभ्यो धर्मं आह यः - परोपकार का शिक्षक ही सभ्य है। तद् विज्ञान यत्र धर्म: -- जिसमें धर्म है वही विज्ञान है। बालादपि सुभाषितम् -- अच्छी बात बालक की भी सुनो। तपः क्षरति विस्मयात् -- अहंकार श्रम का नाशक है। अलाभे न विषादी स्यात् - हानि होने पर निराश न हों। ब्रह्मदानं विशिष्यते - आत्मज्ञान का दान विशेष होता है। मनः सत्येन शुध्यति - मन परोपकार से पवित्र होता है। स्वल्पाद् भूरिरक्षणम् - छोटे काम करके ही बड़ा काम मिलता है। दीर्घो बुद्धिमतो बाहुः - बुद्धिमान् के हाथ दूर तक जाते हैं। प्रज्ञानं श्रेयसे न पराक्रम: > ज्ञान बल से अधिक कल्याणकारी है। छिन््नोऽ पि रोहति तरु: - पेड़ काटने पर भी बढ़ता है। चरन् वै मधु विंदति - निरन्तर श्रम सफलतादायक होता है। स्वेन क्रतुना संवदेत् < आपका काम आपका परिचायक हो। सम्मानात् तपस: क्षय: - पैर पुजवाने से सत्कर्म नष्ट होते हैं। सत्ये धर्म: प्रतिष्ठित: -- परोपकार में धर्म का निवास है। सत्यं एकपादं ब्रह्म <- परोपकार एक चरण वाला ब्रह्म है। नमो दाधार विश्वम् -- प्रणाम (नम्रता) विश्वाधार है। मूढः परप्रत्यय नेय बुद्धि: --केवल दूसरों की सुनने वाला मूर्ख है। अक्रोधेन जयेत् क्रोधम् - क्रोध को शांति से जीतो। उपकारहतस्तु कर्त्तव्य: - मारना हो तो उपकार से मारो। ब्राह्मणस्य तपो ज्ञानम् - ब्राह्मण की तपस्या ज्ञान है। यद् यद् ददाति तत् तत् प्राप्नोति - जो वस्तु बांटोगे वही मिलेगी।

विषादो हन्ति पुरुषम् -- निराशा मनुष्य को मारती है। मितं च सारं च - थोड़ी और सारांश बात उत्तम। अयज्ञियो हुतवर्चा -- परोपकार न करने वाला पतित। व्याधि: पथ्यात् निवर्तते -- रोग परहेज से दूर होता है। वातनाशाय मर्दनम् - वायुजन्य दर्द पर कोमल मालिश करें। पराधीनत्वं दुःखम् - परतन्त्रता दुःख है। सत्यपूतं वदेत् -- सर्वजीवकल्याण की बात करो। आर्जवत्वं ब्रह्मत्वम् -- ईमानदारी ब्रह्म का लक्षण है। प्रेयः हीयते अर्थात् - स्वार्थ हानिकारक है। मैत्री सर्वभूतेष -- सभी जीवों से मित्रता करें। पूर्वम् अतिथि: अश्नीयात् -- पहले मेहमान को भोजन कराओ। आचार्य: ब्रह्मणो मूर्ति: - गुरु परमात्मा की मूर्ति है। माता पृथिव्याः मूर्तिः -- माँ धरती की मूरत है। कामात् क्रोध: -- इच्छा पूरी न होने पर क्रोध होता है। गुणा: प्रेम्णि न वस्तुनि -- गुण प्रेम में होते हैं। मोहः रिपु: -- ममत्व दुश्मन है। कोप: वह्निः -- क्रोध आग है। गुणा: पूजास्थनम् - पूजा या आदर का कारण गुण है। अन्नदानं महादानम् -- भोजनदान महादान है। वाक्प्रसादेन लोकयात्र -- सरस्वती की कृपा से जीवन है।

तीसरी आँख

हर चौराहे पर हरी बत्ती मिलती है। अधिक बाधाओं में अधिक ऊर्जा की प्राप्ति। जीवन का एकमात्र उद्देश्य -- रामकाज या भगवत्कार्य। हम राम जी की इच्छा के उपकरण (साधन) हैं। ज्ञान का इस्तेमाल ज्ञान से अधिक महत्त्वपूर्ण है। संकट क्षमताओं को उभारता है। जैसा समय वैसा व्यवहार। सात्विक (परोपकारी) क्रोध -- शक्तिवर्धक। शक्ति के स्मरण से शक्ति की वृद्धि। विज्ञान = ज्ञान का विवेकपूर्ण उपयोग। विनम्रता हो तो युधिष्ठिर जैसी प्रभावशाली। विनम्र राष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा ने स्वतंत्रता सेनानियों के पांव छुए थे। लम्बी यात्रा पहले कदम से ही शुरू होती है। हमारे काम का असली इनाम काम में आनंद। अपना कर्म ही अपना धर्म है। स्व (आत्मा) के अनुकूल हो जीवन यात्रा। स्व में कभी विकार पैदा नहीं होता। पूरा ब्रह्मांड हमारे स्व में समाया है। अपने गुणों के अनुसार काम में आनंद है। जीवन विजय से महत्त्वपूर्ण है। हर घटना प्रकृति माँ की प्रसादी है। हमारे निर्णयों का आधार रामकाज हो। जीवन स्तर का विस्तार सागर की लहरों की तरह होता है। चेतना का संदेश कण-कण तक पहुंचता है। हम सब में और सब हम में हैं। परसम्मान और कृतज्ञता प्रदर्शन से हमारी राह खुलती है। छोटा काम ही बड़े काम से जोड़ता है। प्राप्त साधनों से करें यात्रा का आरम्भ। सिद्धान्तों से समझोता किए बिना परिस्थितियों से ताल -मेल। सागर को लक्ष्य करती गंगा अनेक मोड़ों या बाधाओं को स्वीकारती है। हम अपनी अनुकूल तरंगों से जुड़ें। चेतना पवित्र और प्रबल होती है। हमारा हर व्यवहार रामकाज (सब की भलाई) को गति दे। चेतना का संदेश -- निडर होकर रामकाज करो। नेल्सन मंडेला अपने पवित्र उद्देश्य के लिए उन््तालीस साल तक जेल में रहे।

भारत की उन्नति में आत्मज्ञान का उपयोग

1.संकीर्ण लक्ष्य की लालसा पाप है। 2. गरीबी एक बड़ी दुश्मन है। 3. दूसरों पर अपना तरीका लादना पाप है। 4.प्रसन्नता और आनंद ईश्वरीय जीवन के लक्षण हैं। 5. भारत एक सनातन प्रतिभा है। 6. मनुष्य ऊर्जा का अंश है। 7. हमारी आत्मा को अभिव्यक्ति की जरूरत है। 8. अंतिम विजय शांति की होती है। 9. रेगिस्तान में भी वनस्पति संभव है। अधयात्म धर्म का उच्चतम स्तर है। उन्नति के लिए प्रेरणा पंख मांगती है। अनावश्यक धन बेचैन करता है। अहंकार गड़बड़ करता है। हम नम्रता पृथिवी से सीखें। उदारता हम सूर्य से सीखें। अपनी सभी योग्यताओं को केवल एक उद्देश्य दिया जाए। स्वास्थ्य लाभ हेतु मन की शांति प्रमुख है। उत्तम विचार सभी दिशाओं से स्वीकार किए जाएं। सहिष्णुता

भारत का विशिष्ट गुण है। धर्मनिरपेक्षता का आधार अध्यात्म है। कल्पनाशील सदा जवान होता है। मनुष्य पैसों से ज्यादा मूल्यवान है। हमारे अधिकारों से सबके अधिकारों की रक्षा हो। अपने काम को यथा आवश्यक रूप देने से उन्नति संभव। विद्यार्थियों को ज्ञान के साथ कल्पनाशीलता भी दी जाए। साधनहीन और साधन संपन्न के बीच अन्तर कम से कम हो। शासकों और नागरिकों के सदाचार एक समान हों। देश किसी भी व्यक्ति और संस्था से बड़ा है। अच्छी पुस्तकें पढ़ने से सोच विकसित होती है। उन्नति के आधार: ज्ञान, साहस और परिश्रम। हम दूसरों की सफलता में भागीदार बनें। असंभव काम भी संभव हो सकता है। समाज की उन्नति के तीन आधार- माता, पिता और शिक्षक। संचित ज्ञान को उपयोग में लाया जाए। विज्ञान और अध्यात्म दोनों का लक्ष्य - जनकल्याण। समाज की सर्वोच्च सेवा : शिक्षादान। शिक्षा ग्रहण एक अंतहीन यात्रा है। मोलिकता सरस्वती को लक्ष्मी में बदल सकती है। मोलिक रचना का आधार -- कल्पना शक्ति। दिमाग और दिल को एक बना कर चलें। चिंतन भी एक संपत्ति है। हम अपने भविष्य की रूपरेखा कागज पर बनाएं। हर आदमी अपने देश के इतिहास का एक पृष्ठ बने। सोच विकास का बीज है। शिक्षा और उसके उपयोग के मेल से ऐश्वर्य आता है। शिक्षा से कल्पनाशीलता पैदा होती है। कल्पना से विचार बनते हैं। सरलतापूर्वक श्रम सफलता लाता है। सकारात्मक विचार बिंदु सदा आचरणीय होता है। गंभीरतापूर्वक इच्छित वस्तु अवश्य प्राप्त होती है। विश्वास में नियति (पूर्व निर्धारित) को बदलने की शक्ति है। आम सहमति की प्रवृत्ति सबसे उपयोगी होती है। हम हम बन सकते हैं। प्रेरणा का मूल स्त्रोत मानवता है। मुफ्त का भोजन अपच करता है। भगवान् जिम्मेदार, सरल, ईमानदार और मेहनती आदमी को पुरस्कृत करते हैं। कुछ देना सर्वोत्तम गुण है। हमारा हर क्षण रचनात्मक हो सकता है। हम अपना बेहतर दूसरों को देने का प्रयास करें। एक नाविक के महान् पुत्र डा0 अब्दुल कलाम की जीवन यात्रा हम सब के लिए प्रेरक है। त्रुटि या गलती पर विनम्र विरोध उचित है। शाकाहार एक श्रेष्ठ गुण है। अपने काम के प्रति समर्पण की भावना हो। हमारा पाठ्यक्रम एक मानसिक प्रशिक्षण हो। भगवान से परोपकारार्थ जीने का आशीर्वाद मांगा जाए। भारत को मेधा के साथ साहस की जरूरत है। अपना काम दिल से करें। अगला काम बाद में सोचें। छोटा उद्देश्य एक अपराध है। समस्या के समाधानार्थ एक टीम बनाएं। नेतृत्व अप्रत्यक्ष हो। व्यक्तिगत दोषारोपण से बचा जाए। असफलता विकास यात्रा का एक हिस्सा है। नकारात्मक प्रसंग को सकारात्मक बनाया जाए। बोस हमेशा सही नहीं हो सकता। डा0 विक्रम सारा भाई डॉ0 कलाम के आदर्श गुरु थे। कर्मनिष्ठा और सच्चाई में आकर्षण होता है। सत्य (सर्वजनकल्याण) की खोज हमें मुक्त कर देगी। अध्यात्म (व्यवहारगत आत्मज्ञान) सर्वोत्तम धर्म है। सर्वोत्तम सलाहकार -- अपनी आत्मा की आवाज। जीवन आत्मा का आशीर्वाद है। सहज स्वभाव ही सब कुछ है। पेड़ निर्माणाधीन भवन से महत्त्वपूर्ण है। बिना अपनी उपस्थिति दर्ज कराए मूल्यवान पाठ पढ़ाया जाए। हम अपने को हानि पहुँचाने वालों को क्षमा का दान करें। पेड़ों की तरह खुद गर्मी सहन करके छाया (सुख) का दान किया जाए। पालतू पशुओं को पहले भोजन (चारा) दिया जाए। हर चीज़ में सराहनीय बिंदु की खोज की जाए। पूर्वाग्रहों से मुक्त रहा जाए। हम भारतीय बनें और भारतीय चीजें खरीदें। अच्छी सलाह को सदा सराहा जाए। पीठ पीछे प्रशंसा की जाए। अपने संगठन के हित की रक्षा की जाए। अनावश्यक खर्चे घटाए जाएं। आवश्यकताएं पूरी करने के बाद बचा धन स्वयंसेवी संस्थाओं को दान दिया जाए। हमारे यहाँ स्वच्छ भोजन, स्वच्छ शौचालय और धुआं मुक्त रसोई की व्यवस्था हो। देश में हर व्यक्ति रात्रि शयन से पूर्व दूध पी सकने लायक हो।

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं

प्रेम के अंदर बसता है परमात्मा

प्रेम एक मधुर रस है। इसके अन्दर से परमात्मा प्रकट होते हैं। परमात्मा के प्रति प्रेम से प्रह्लाद ने जड़ वस्तु के अंदर से परमात्मा को प्रकट कर दिखा दिया। प्रेम ही जीवन नोका को पार लगाने में समर्थ है। ब्रज के प्रेम को ही देखें, उन्हें नियम पसंद ही नहीं आते। कृष्ण के प्रति गोपियों का प्रेम देखकर उद्धव का ज्ञान ही लुप्त हो गया।

असली प्रेमी वह है जिसको दूसरों की पीड़ा-नज़र आती है। प्रेमी का परमात्मा दुःखियों के दरवाजे पर रहता है। प्रेमी की नज़र में समाया हुआ परमात्मा वहीं दिखाई देता है जहाँ भी उसकी नज़र जाती है। भगवान अपने प्रेमी से दूर जा ही केसे सकते हैं। हृदय की पकड़ बड़ी मजबूत होती है। वे हार जाते हैं उस धर पकड़ में। प्रेमी खुद भगवान् की तस्वीर बन जाता है। दोनों की तस्वीर एक जैसी है और दोनों एक दूसरे को देखते ही रह जाते हैं। भगवान् प्रेमी के अंदर जाने में समर्थ हैं इसलिए उसके अंदर की बात जानते हैं। प्रेमी तो मछली की तरह है जो परमात्मा रूप जल से अलग होते ही प्राण त्याग देता है।

परमेश्वर प्रेमी का मित्र है और वह अपने मित्र की तस्वीर अपने दिल रूपी शीशे में सहेज कर रखता है। ग्वालिनें कहती हैं कि हम ब्रजेश्वर से पृथक नहीं अतः हमें विरागिनी, पगली या वियोगिनी कुछ भी कह दो। उधर प्रेमी कृष्ण भगवान् की बात ही और है, कहते हैं मेरा प्रेमी भक्त अपने आचरण से सारे ब्रह्माण्ड को पवित्र कर देता है।

प्रेमी भक्त के अनुभव बड़े विचित्र हैं। कहता है जब मैं (अहंकार) था तब भगवान नाम की चीज़ ही नहीं थी। जबसे हमारे अंदर भगवान् आ बसे तब से हम (अहंकार) ही न रहे, भगवान ही शेष रह गए हैं। शरीर कपड़े के समान है, जब से इस कपड़े में भगवान् का रंग चढ़ा तब से कपड़ा फट-फट कर उड़ा जा रहा है पर उसका रंग (प्रेम) नहीं जाता।

प्रेमी को मित्र का दुःख एक कण के समान होने पर भी उसे पर्वत के समान दिखाई देता है। प्रेमी कृष्ण ने तो अपने दुःखी मित्र सुदामा के पांव अपने आंसुओं तक से धो डाले। प्रेमी अपने प्रेमी के प्रेम पर न्यौछावर है, जहां भी नज़र डालता है वहीं दिखाई देता है। इस दस दरवाजे वाले शरीर के अंदर कोई भी अपने प्रेमी को पहचान सकता है। जो प्रेम रूपी बाण से घायल हो जाता है उसको भला कौन सी दवा स्वस्थ कर सकती है। मीरा के घावों को केवल वैद्यराज सांवलिया ही ठीक कर सके।

प्रेमी ने जब अपने खुद को मिटाया तो उसके अंदर अपने प्रेमी परमात्मा के अलावा कोई शेष न बचा। प्रेम स्वयं परमात्मा का रूप है। जब हमारा अंतःकरण तरल हो जाता है, वही तो प्रेम है। प्रेमी उसके इलावा कोई और चर्चा नहीं करना चाहता है। हम उसकी खुशी में ही खुश हैं। कमल के फूल को ही देखो, प्राण छोड़ देता है पर प्रेम करना नहीं त्यागता। सूखता है तो तालाब सहित, अकेला नहीं सूखता। ओले गिरें तो भी प्रेमी की खेती हरी-भरी रहती है पानी बरसे तो भी।

प्रेमी का शरीर, धन-दौलत सब उसके प्रेमी ईश्वर का ही तो है। अपना कुछ सौंपते हुए दुःख हो सकता है परन्तु उसकी चीज़ उस को सौंपते हुए किस बात का अफसोस। गोपी उद्धव से कहती है, मैं तो प्रेम की भूमि ब्रज को भूल नहीं सकती। जिस ब्रज ने मुझे शरीर दिया उसे भूलकर मैं नमक हराम नहीं बन सकती। वह जल की बूंद भी कितनी बदकिस्मत है जो एक नदी भी न बन सकी। प्रेम का मार्ग तलवार की धार के समान है, इस पर चलना सबके वश की

बात नहीं है। प्रेमी कहता है कि पहले मैं भी अक्कल (दिमाग या तर्क) का मरीज था लेकिन अब मुझे मस्ती (प्रेम) ने स्वस्थ कर दिया है। अब तो बस जो प्रेम मुझे घायल करता है वही मेरी दवा बन जाती है।

हमारे दैनिक व्यवहार में परमात्मा की झलक

दुनिया में फैल रही समस्त तरंगों का मूल चैतन्यसागर परमात्मा है। उसी में से त्रिपुरा अर्थात् ज्ञान, इच्छा और क्रिया रूप त्रिविध तरंगें निकल रही हैं। उन्हीं से रैदास को चर्मकारिता में और कबीर को बुनकरी में कुशलता मिली। समस्त जीवों और अणुओं के अंदर वही तरंगें क्रीड़ा कर रही हैं। ज्ञान और अज्ञान की तरंगों का महा स्त्रोत एक ही है, जो जिसे चाहे संचय करे।

आत्मा का अनुभव समस्त समस्याओं का समाधान है। सूर्य की एक किरण सात रंगों को धारण करती है। दुर्वासा, जनक और वशिष्ठादि ऋषियों को आत्मा का नित्यानुभव प्राप्त था। समस्त कल्पनाओं का एक ही आधार आत्मा है। आत्मा से आने वाली हर तरंग की यात्रा का अनुभव आत्म चिकित्सा या विकास की यात्रा में किया जा सकता है। आत्मज्ञान में अहं का विलय किया जाता है। अहं का मतलब है अपने का विराट समूह से अलग एक खंड (टुकड़ा) मान लेना।यही सारी समस्याओं का मूल है।

आत्मा में सारे कर्मसिद्धान्तों का विलय होता है। शरीर- आत्मा जैसे समस्त द्वंद्व (द्वैत) मूलरूप से एक ही हैं। परमात्मा होने का मतलब है अनढका होना। हमारी परमात्मा की स्मृति अचेतन मन में दबी है। अकर्ता कुछ न करते हुए भी सर्वकर्मकर्ता है। हम अपने सर्वश्रेष्ठ स्वभाव में प्रकट हो जाएं। सृष्टि का मूल स्त्रोत समष्टि (परमात्मा) है। व्यक्तिगत चेतना को खो देने पर समष्टि चेतना का उदय होता है। सागर के ऊपर की लहरें अलग अलग हैं पर (आधार) एक है। आत्मकेन्द्रित इन्द्र या आत्मा होता है। और शरीर केन्द्रित प्रेत। श्रीकृष्णार्जुन संवाद शरीर केन्द्रिता से आत्मकेन्द्रितता तक की यात्रा है। इसका आरम्भ मन से होता है और अंत मन को खो देने पर।

वृत्र आत्मा (चेतना) का आवरण (ढक्कन) है। यह आत्मानंद रूप वर्षा में बाधक है। सूखा अकाल (अज्ञान) डालता है। इन्द्र आत्मानंद रूप वर्षा करने वाला देवता है। संसार की हर चीज़ बेजोड़ है। दूसरे की नकल आत्मघात है। हर एक के स्वभाव का शिखर आत्मचेतना (मैं) है। अर्जुन के जीवन की सार्थकता उसके अर्धक्षत्रिय (अचेतन) से पूर्णक्षत्रिय (सचेतन) होने में हैं। अर्जुन (आत्मा) से कृष्ण (परमात्मा) होने में है। दक्ष (होशियार) प्रजापति भौतिक संपदाओं से संपन्न था। संपदा के साथ घमण्ड से बचना कठिन होता है। उसे घमण्ड था। भगवान् शिव चाहते हैं कि दक्ष जैसे भौतिकवादी विनम्र बनें। शिव का वाहन नंदी बैल श्रम का प्रतीक है। हिरण्यकशिपु कोमल बिस्तर (श्रमहीन जीवन) का आदी था। विलासी राजा का बेटा प्रहूलाद (विशेष रूप से खुश) परमात्मानुभूति का आनंद पाना चाहता था। भगवत् प्रेमी का हर व्यवहार भगवत्पूजा बन जाता है।

दुखी संसार की सेवा भगवत्सेवा है। व्यक्तिगत भगवत्प्रेमरस से वैश्विक रास नृत्य पैदा होता है। अपने कर्तापन होने का अभिमान कर्म को भगवदर्पण करने से मिटता है। पिस (मिट) जाने के बाद ही मेंहदी रंग (सफलता) लाती है। सेवा करने से शरीर पवित्र होता है। करने का अभिमान त्याग कर कर्म सेवा बन जाता है। दान करने से धन पवित्र हो जाता है। स्वार्थरहित प्रेम से परमात्मा मिलते हैं। छलरहित हृदय में भगवान् का वास होता है। हम भगवान् की खुशी में खुशी देखें। तीन गुणों के पर्दे के अंदर परमात्मा की झलक देखें। अनावश्यक धन के बढ़ने पर धर्म घटता है और उससे

विनाश होता है। धन धैर्य से आता है। जैसे दूध का सार मलाई है वैसे ही जीवन का सार भलाई है। मोह (ममत्व) का कच्चा धागा लोहे की बेड़ी से भी मजबूत होता है। अपने से छोटों का सम्मान करने में बड़प्पन है। भूल के लिए माफी मांगना इन्सानियत है। लघुता (विनम्रता) से स्वामित्व मिलता है। परमात्मा पानी में रस रूप में तथा वेदों में प्रणवरूप में विद्यमान है।

धर्म का ज्ञाता वह है जो समस्त जीवों के हित में लगा है। समस्त धर्मों का सार इन्सानियत है। एक ही महाशक्ति परमात्मा से सारा संसार उपजा है। यह सब समझते हुए हम अपने पड़ोसियों से अकारण प्रेम करें। हर जीवन में एक ही महाज्योति का प्रकाश है। कबूतर बिना किसी भेद-भाव के हर धर्म के मन्दिर की शिखा पर जाकर बैठता है।

हम अपने सर्वोत्तम (चेतन) को निखारें। हमारी उन्नति का आधार हमारे हृदय की विशालता है। उन्नति का आधार हमारे हृदय की विशालता है। जहाँ धर्म का वास होता है वहाँ उन्नति होती है। अपने उद्देश्य पर केन्द्रित प्रयत्न सदा शक्तिशाली होते हैं। भगवान् राम के दर्शन गरीबों की भूख प्यास के अंदर होते हैं। जिस परिवार में दादी के किस्से सुनाई देते हैं उस परिवार में सदा एकता बनी रहती है।

भारतीय संस्कृति का सार राम कथा में है। हम दान करें तो स्नान की तरह गोपनीय करें। अंधकार कोसने से नहीं दीप जलाने से मिटता है। कछ देकर ही प्राप्ति का रास्ता खुलता है। नम्रता का असर बड़ी दूर तक जाता है। संतुष्ट न होना दरिद्रता का लक्षण है। हम गिरकर भी उठें और चल पड़ें। बाधाएं अस्थायी होती हैं। अपने काम में व्यस्त रह कर अपना स्वास्थ्य कायम रखें।

संपूर्णसुखदायक आध्यात्मिक सूत्र

हम अपनी हर गतिविधि की समीक्षा करें। पुरुषार्थी मृत्यु की परवाह नहीं करता। माँ और पिता के अन्दर समस्त तीर्थों का वास है। हार मानने में असफलता है। चर एव इति =सदा कर्मशील रहो। जले (पुषार्थ किए) बिना उजाला नहीं होता। रहोसाधारण, काम करो असाधारण। भगवान् के पाँच घर - गंगा, गाए, गुरु, गायत्री और गीता। मुस्कान भी एक दान है। भगवान द्वारा प्रकाशित दीप (आत्मा) कभी नहीं बुझता। शुद्ध (ग्रामीण) हवा सौ दवाओं का काम करती है। स्वास्थ्यनाशक - चाय, ब्रेड , बिस्कुट, चाट, कोल्ड ड्रिंक्स (ठण्डा पेय) और नशे आदि। स्वास्थ्ययायक - तुलसी, आंवला, गिलोय और चिकनी मिट्टी (लेप)। अप्दीपो भव - अपने आत्मा के प्रकाश (मार्गदर्शन) में चलो। शिष्य गुरु के आत्मा से उत्पन्न होता है। स्वकर्म या स्वधर्म बिंदु को सिंधु में मिला देता है। परोपकारी की विपत्तियां अपने आप नष्ट हो जाती हैं। हमारा राष्ट्र हमारा देवता है। पालन करने वाला पिता कहलाता है। माता-पिता की प्रसन्नता से प्रजापति (भगवान्) प्रसन्न होते हैं। माँ की प्रसन्नता से सारी धरती प्रसन्न होती है। हम अपनी वासना (इंद्रियों की भूख) को उपासना में बदलें। हमें मनुष्य योनि माता-पिता की कृपा से मिली है। माँ दुनिया का सर्वप्रथम विश्वविद्यालय है। पिता सौ गुरुओं के बराबर है। अहंकार (अभिमान) को जीतकर आत्मानुभव होता है। हमारे बंधन (दुःख) का कारण हमारी आदतें होती हैं। जनेऊ धारण करने का मतलब है पशुता (अज्ञानता) का त्याग। भारतीय संस्कृति का पिता यज्ञ अथवा सामूहिक परोपकार है। भारतीय संस्कृति की माँ गायत्री या परमात्मोपासना है। ब्रह्मा हमें रचना की प्रेरणा देते हैं। विष्णु परोपकार की प्रेरणा देते हैं। शिव संकुचित विचारों का नाश करते हैं। अध्यात्म कुछ देने की कला का नाम है। वस्तु का अभाव भी सुंदर होना चाहिए। हम भेड़ (जीव) नहीं शेर (ब्रह्म) हैं। शरीर

और आत्मा एक ही सत्य (परमात्मा) के दो तट हैं। मकड़ी (चेतन) अपने अंदर के धागे से अपनी दुनिया बुनती है। हमारा नाम हमारे स्वाभाविक गुण को दर्शाता है। हमारे श्वास और प्रश्वास के बीच कालात्मा सूर्य बोलता है। हमारे अंदर श्वास सकार ध्वनि से प्रवेश करता है। हकार की ध्वनि से सांस बाहर आती है। यह हंस मंत्र जीव के अंदर स्वभाव से ही चलता है। हंस मंत्र का अनुभव परमहंस (परमात्मा) के अनुभव तक पहुंचाता है। हमारी आँखों में हमारा प्रियतम (परमात्मा) रम रहा है। जिसे परमात्मा का अनुभव होता है, वह उसे बता नहीं सकता। परमात्मानुभव किसी पात्र (योग्य) में ही प्रकाशता है। गोपियों को अपनी भी सुध न रही, केवल नंद लाल बाकी रह गए। जिसे केवल परमात्मा दिखता है, वह विशाल हृदय हो जाता है। हम सब एक ही परमात्मा के गोत्री हैं। ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है। भगवान् की याद में मन भगवान् ही हो जाता है। सांसारिक चीजों को याद करते हुए मन उन्हीं में लीन हो जाता है। भगवान् से विरह (अलगाव) दाहक होता है। परमात्मप्रेमवश प्रह्लाद ने पिता को और गोपियों ने अपने पतियों तक को त्याग दिया था। गोपियों के रोम-रोम में श्याम थे, योग लायक शरीर में जगह ही नहीं थी। एक मन में केवल एक मात्र भगवान् ही बस सकते हैं। परमात्मानुभवी काम तो पहले की तरह ही करता है परन्त उसका कर्ताभाव नष्ट हो जाता है। संसार परमात्मा का शरीर है। एक परमात्मा में अनेकता के दर्शन का कारण मन या अज्ञान होता है। पदार्थ - घनीभूत चेतन शक्ति अथवा परमाणुओं का संगठन। परमेश्वर की संपूर्णता जड़ परमाणु और चेतन दोनों से है। परमात्मा की दो भुजाएं - संकल्प और परमाणु। संसार (परमाणुओं) में सामंजस्य स्थापक - चैतन्य। सांसारिक द्वंद्व या विषमता एक कल्पना है। अविद्या - जड़ (परमाणु समूह) को चेतन समझना। परमात्मा की योजना - जीवों का आत्मविकास। संकुचित स्वार्थवश ईश्वरीय योजना विस्मृत। जड़ परमाणु में से अहं के हटने पर अद्वैत का अनुभव। शरीर का धर्म - परिवर्तनशीलता या दुःख। आत्मा का धर्म - स्थिरता या सुख। शरीर या परमाणु संगठन में ज्ञान नहीं होता। चेतना शक्ति में परमाणुओं को जोड़ने और तोड़ने की क्षमता है। दुःख का कारण ईश्वरीय योजना की अवहेलना है। सूर्य में बादलों को पैदा करके उससे अपने आपको ढकने और उघाड़ने की क्षमता है। आत्मा में भी उसी तरह आवरण (संसार) को बनाने और हटाने की क्षमता। एक ही परमतत्व के दो ध्रुव - चेतना ओर पदार्थ। पदार्थ की केन्द्रीय चेतना उसे आकार देती है। धर्म या ईश्वरीय नियम आत्मचेतना को विकसित करते हैं। अध्यात्म - चेतना शक्ति का विज्ञान। शरीर एक चेतन शुक्राणु का विस्तार है। बार-बार जन्म लेने का कारण - अतृप्त वासना या इच्छा। जीव वासना की पूर्ति न होने पर नेति नेति करता हुआ - उच्चता की ओर अग्रसर। वेदान्त - जीवन को पूर्णता में जीने की कला। शरीर पूर्णता की प्राप्ति में सहायक है। गतिशील परिधि (कील से दूर) में जीने वाला दुःरखी होता है। स्थिर कील (केन्द्र) में जीने वाला सदा सुखी। मन एक आदत है।

गायत्री मंत्रार्थ में परमात्मानुभव

गायत्री मंत्र परमात्मा से प्रार्थना है। यह प्रार्थना मनुष्य की हर प्रकार से रक्षा करती है। इससे आत्मा का विकास होता है। यह मंत्र गुरु परंपरा से प्राप्त होता है। यह नित्य और अनित्य वस्तुओं में विवेक करवाती है। गुरुकुल में प्रवेश से पहले जनेऊ धारण करवाकर यह मंत्र दिया जाता है। इससे आत्मशक्ति मिलती है। यह दुर्घटना से बचाती है। रूद्राक्ष की माला में जपने से यह अनंत गुणा फलदायक हो जाती है।

आकाश गायत्री के केश हैं। यह भूत-प्रेतादि (अदृश्य जीव योनियों) के गुप्त प्रहारों से बचाती है। इसकी ध्वनि (ऊर्जा) से ब्रह्मांड में संकोच और विस्तार होता रहता है। चेतना की मूल ध्वनि वेद और उसका सार गायत्री है। ध्वनि का मूल अनाहत (अपने आप उत्पन्न) ध्वनि है। गायत्री सर्वाधिक कल्याणकारी मंत्र है। प्रतिष्ठित गायत्री मूर्ति या यंत्र के समक्ष जप उत्तम है। अर्थज्ञानपूर्वक जपने से यह मंत्र समस्त इच्छाओं को पूरा करता है। इसकी दीक्षा में समस्त ज्ञान-विज्ञान दिए जाते हैं जिससे पाप राशि (नीचता के संस्कार) नष्ट हो जाते है।

गायत्री माँ में अपनी सृष्टि के प्रति सर्वाधिक ममता है। इसका ध्यान प्रकाश रूप है। ब्रह्मादि देवता भी इस नित्यनूतन मां की प्रार्थना करते हैं। गायत्री मंत्र के अर्थ को जानने वाले के लिए तीनों लोक अनुकूल हो जाते हैं। उसे वेदों का ज्ञान हो जाता है। उसको धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष (आनंद) चारों फल मिलते हैं। जापक का शरीर ही देवी (शक्ति) मय हो जाता है। गायत्री का मुंह अग्नि, जिहवा, सरस्वती, पेट आकाश और पांव पृथिवी है। ये काली (क्लीं) के रूप में अज्ञान का, लक्ष्मी (श्रीं) के रूप में अभाव या अपूर्णता का तथा सरस्वती (ह्रीं) के रूप में अविद्या का नाश करती हैं। |

अध्यात्मवैज्ञानिक जीवन दृष्टि

ब्रह्म की प्रेरणा से सारा विश्व गतिशील है। हे भगवन्, हमें सब जीवों की भलाई में लगाओ। परमात्मा हमारे द्वारा अपना लक्ष्य पूरा कर रहे हैं। वेदों का तात्पर्य अपने आत्मा को ब्रह्म में लीन करने में है। एक परमाणु अपने आप में एक छोटा सा संसार है। आध्यात्मिक दृष्टि वाले के लिए समस्त पदार्थ पारदर्शी बन जाते हैं। हिमालय भगवान् शिव का अट्टहास (हंसी) है। आध्यात्मिक स्पंदन ब्रह्मांड को प्रभावित करते हैं। ब्राह्मण (ब्रह्मोपासक) सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए कभी असत्य नहीं बोलता। सर्वजीवहतिकारी भाव में ही सत्य या परमात्मा है। मैं सर्वजीवकल्याण रूप हूँ (शिवोS हम्)। हम अपने कर्तव्य में अपना आत्मा देखें। संसार का मतलब है एक ही महा प्रकाश की विविध अभिव्यक्तियां। आत्मानुभूति के लिए द्वैतरूप माया के पर्दे को फाड़ना पड़ता है। श्वास (हवा) शरीर और आत्मा को जोड़ता है। परमात्मा चाहते हैं कि हम उन्हीं की तरह सर्वजीवहितकारिता को अपनाएं, अपने विरोधियों की भी भलाई करें। हर आदमी परमात्मा की इच्छा की अभिव्यक्ति है। सृष्टि सनातन ऊर्जा का संकोच और विस्तार है। ब्रह्माण्ड परमात्मा के विचारों की मूर्ति है। परमाणु में भी आत्मशक्ति है परन्तु अनभिव्यक्त। वैदिक पूजा की पृष्ठभूमि में वैज्ञानिकता है। परमेश्वर का प्रियतम गुण विनम्रता है। मंत्र की बीजध्वनि विद्युत् गति से भी तेज चलती है। हर जीव रामसेतु में गिलहरी की तरह भगवान् के काम में लगा हुआ है। सदाचारी गुरु परमेश्वर का प्रतिनिधि होता है। हंस मंत्र का मतलब है अहं सः (मैं वही परमात्मशक्ति हूँ)। जीवन ऊर्जा और सनातन ऊर्जा दोनों एक हैं। धुंध भरी माया में हमारा सो अहं स्वरूप भूल गया है। धर्म ब्रह्मांड का प्राकृतिक नियम और परमात्मप्राप्ति का मार्ग है। वेद मानव कर्म के नियामक हैं। हे गायत्री परमेश्वरी, मेरे सभी अंगों की रक्षा करो। ब्रह्मांडधारिणी गायत्री प्रकाश और अंधकार के बीच संध्या (कील) में स्थित है। नशा आत्मज्ञान को ढकता है। आत्मज्ञान का मतलब है अपने अंदर के साक्षी को जगाना। हम अपने अंदर के आनंद से पुनः संपर्क करें। प्यार का मतलब है अपने आत्मा की तरंग का विस्तार। चेतना हमारे मन- मस्तिष्क को ताजा करने वाली ऊर्जा है। शांति के भाव में स्वास्थ्य और ताकत निहित है। हम अपने लिए भगवत् प्राप्ति के मार्ग का चुनाव स्वयं करें। स्वतंत्रता का मतलब है निजी स्वार्थो से छुटकारा।

अभिमान का त्याग करने से हम सब के समीप पहुंचते हैं। आत्मा (सब के लिए) जीने से सब सुख हमारे पास में आते हैं। क्षमा कर देने से खलनायक भी नायकत्व की ओर बढ़ता है। हमारी आदत (मन) पिघलनी चाहिए। हमारी रचना (कर्म) के मूल में ईश्वरीय योजना हो। प्रकृति मूलतः आत्मा की अनुयायी होती है। आत्मकेन्द्रितता के बिना जीवन में अवरोध आते हैं। परोपकार रहित प्रयत्न तनाव पैदा करते हैं। हम अपनी जीवहितकारी कल्पनाओं को पंख चलाने का अवसर दें। जादू भरी सकारात्मक सोच -मैं यह काम कर सकता हूँ। हम सकारात्मक सोचें, बोलें, लिखें और अपनाएं। हमारे जीवन का आदर्श - हमारा स्वाभाविक काम। हम अपनी इच्छा ब्रह्माण्ड की इच्छा में मिला दें। ब्रह्म (परमेश्वर) की योजना हमारी योजना से बेहतर है। हमारा शरीर परमेश्वर की ज्योति है। हे भगवान् शिव, हमें मृत्यु के भय से मुक्त (निर्भय) करो। हम अपनी सुप्त आध्यात्मिक चेतना को जगाएं। यंत्र के बीजाक्षर में परमात्मशक्ति का निवास है। हमारा यह दुर्लभ मानव शरीर भगवत्कार्य में लगना चाहिए। पारम्परिक विधि से गुरु से प्राप्त गायत्री मंत्र सर्वोत्तम है। प्रणाम का सबसे बड़ा लाभ - अहंकार से छुटकारा। ब्राह्मण का लक्षण - जो ब्रह्म तक ले जाए। हम अपने जीवनादर्श से न हटें। भगवत्प्रयोजन से कर्मयात्रा में आनंद है। हमारी हर मंजिल एक लान्चिंग स्टेशन हो। विनम्रता में सहयोग की प्रेरणा होती है। गलती पर क्षमायाचना एक सुंदर गुण है। शत्रुता का बीज अहंकार (अभिमान) है। नफरत एक प्रकार का तेजाब है। हम हारे हुए को हारा हुआ महसूस न होने दें। ईमानदारी पुरस्कृत होनी चाहिए। हम भीड़ में भी अपना आत्मिक मूल्य बनाए रखें। अपने सहज कर्म के विकास से विकलांग भी अन्यों की अपेक्षा अधिक आगे निकल सकता है। अपनी अनुकूल हवाओं का सदुपयोग करने में समझदारी है। पसीने पर ही बादल मेहरबानी करते हैं। अवसर विनम्र की निकटता चाहते हैं। विवेक अवसर को सींचता है। हमारे आंतरिक शिल्पी (श्रेष्ठ विचार) हमारा आकार गढ़ते हैं। वचन का पालन प्रतिष्ठावर्धक होता है। आभार प्रदर्शन (धन्यवाद) से ऊर्जा बढ़ती है। बांटने वाला परमेश्वर का प्रतिनिधि होता है। पैसा घूमने से बढ़ता है। ब्रह्माण्ड का खजानची सत्कर्म का पक्ष लेता है। स्नानकाल में मंत्रोच्चारण करने से तनाव दूर होता है। मुस्कुराना एक आकर्षक उत्पाद है। विज्ञान ज्ञान को सुव्यवस्थित करता है। विवेक जीवन को सुव्यवस्थित करता है। हम ब्रह्माण्डीय सुर के साथ अपना सुर मिलाएं। सफलता लपकने (अधैर्य) वाले से दूर भागती है। हम निष्काम सरिताओं की तरह सागर (परमेश्वर) की ओर बढ़ें। हमारे काम सर्वजनहिताय -सर्वजन सुखाय हों। हम ब्राह्मी (विश्वव्यापी) चेतना से जुड़ने की कोशिश करें। संपन्नता में विनम्रता सोने पर सुहागे का काम करती है। "मुझे अभिमान नहीं" यह भी अभिमान हो सकता है। प्रसन्न रहना यज्ञ करने के समान है। यज्ञ शरीर को ब्रह्म (परमात्म शक्ति) मय बनाता है।

व्यापक सोच व्यापक जीवन

धर्मपत्नी अर्थात् धर्म या ईश्वरीय नियमानुसार पत्नी। होश - अपने स्वाभाविक कर्म की याद। परमात्मा ही गायत्री है। ब्रह्म परमात्मज्ञाता ब्राह्मण में रहता है। हमारी समाजोपयोगिता हमारे सहज कर्म में निहित है। अब्राह्मण इतरापुत्र ऐतरेय ने ब्रह्म ज्ञानपूर्वक ऐतरेय - ब्राह्मण की रचना की। टूटी चीज़ जुड़ जाती है परन्तु टूटा रिश्ता नहीं। ज्ञान का उद्योग में निवेश लाभदायक है। पूजा की सर्वोत्तम सामग्री सहज कर्म है। ईश्वर केवल परोपकारी का उपकार करता है। आशीर्वाद देने की शक्ति केवल ब्रह्मज्ञाता ब्राह्मण में होती है। राज्यासन पर बैठने का अधिकार केवल जनक जैसे ब्रह्मवेत्ताओं को है। भ्रष्टाचारीशासक (रावण की तरह) असुर होता है। मेहनत से जो कुछ मिल जाए उसी को

अपना भाग्य समझा जाए। काम का कारण काम से अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। माँ प्रकृति (परमात्मा) का प्रत्यक्ष रूप है। कर्म के फल का त्याग ध्यान (मेडिटेशन) से श्रेठ है। हम अपने आत्मा के प्रकाश या निर्देश में चलें। हम अपने बिंदु (जीवन) के तार सिंधु (ब्रह्मांड) से जोड़ें। आशा जीवनदायक शक्ति है। हमारी समस्याएं भगवत्प्राप्ति की सीढ़ियां हैं। शरीर में नहीं, उत्साह में जवानी होती है। हम हर यज्ञ या परोपकार में यथाशक्ति अपना अंशदान दें। धर्म -अपनी ईश्वर प्रदत्त प्रतिभा का सदुपयोग। सरलता स्थिर और सदाबहार होती है। खुशहाली की सार्थकता परोपकार में है। मनुष्य के जीवन का परमोद्देश्य रामकाज (भगवान् का कार्य) है। हमारे वोट देने की सार्थकता राष्ट्र को सुंदर आकार देने में है। नम्रता देने से नम्रता मिलती है। संसार की सेवा करने वाले की संसार सेवा करता है। अहम् (कार) एक हानिकारक नकारात्मक ऊर्जा है। आत्मा का विस्तार मैं से हम की ओर होता है। मां गायत्री मानवमात्र की सर्वप्रथम कुलदेवी है। भयादि नकारात्मक विचारोंसे सकारात्मक ऊर्जा का ग्राफ नीचे गिरता है। हम सामने से आ रहे जीव को रास्ता दें। सर्वजीवहितकारी विचार प्रभावशाली होते हैं। हर व्यक्ति की गरिमा रक्षणीय होती है। सहयोगी को सफलता का श्रेय देने से उसके मनोबल की वृद्धि होती है।

भाग - 4 बघाट की अन्य विशेषताएँ

व्यापक हित के समर्थक थे राजा दुर्गा सिंह

राजा दुर्गा सिंह ने पहाड़ी रियासतों को भारतीय गणतंत्र में विलय करवाने के लिए मुख्य भूमिका निभाई थी। उस समय प्रजामण्डल के नेताओं की अध्यक्षता उन्होंने ही की थी। ये उस जमाने में शिक्षा के प्रचारक थे। 15- 9-1901 को जन्मे राजा साहब की गणतंत्र में गहरी आस्था थी। 26-1-1948 को राजा दुर्गा सिंह ने शिमला की सभी रियासतों के प्रजामण्डल के नेताओं की बैठक सोलन में बुलाई थी। 26 रियासतों के प्रतिनिधि उसमें शामिल हुए थे।

उस समय श्री दुर्गासिंह ने सब से पहले तिरंगा फहराया और बघाट की पुलिस ने राष्ट्रीय झण्डे को सलामी दी। उस सभा में यह भी निर्णय लिया गया कि सभी रियासतों को मिलाकर उसे हिमाचल प्रदेश का नाम दिया जाए। उसके बाद गृहमंत्री सरदार पटेल से निवेदन किया गया कि पंजाब हिल स्टेट की दूसरी रियासतों को भी हिमाचल प्रदेश में सम्मिलित किया जाए। इस प्रकार 15-4-1948 को हिमाचल प्रदेश अस्तित्व में आया।

जब एक क्रान्तिकारी ने कायलर गाँव को धन्य किया

भगवान सिंह ज्ञानी ने विदेशों में बसे भरतीयों में स्वाधीनता की आग जगाई थी। वे स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 50 वर्षों के प्रवास के बाद तत्कालीन पंजाब के गांव कायलर (सोलन शहर के पास) में आकर बसे थे। उन्होंने कनाडा में यूनाइटेड इंडिया लीग का गठन किया था। इस पर कनाडा सरकार ने उन्हें बंदी बना लिया था। वहां से उनका देश निकाला हुआ तो उनको अमेरिका में शरण लेनी पड़ी थी। वे जोशीले वक्ता और क्रांतिकारी कवि थे। वहां वे क्रांतिकारी गदर पार्टी में शामिल हो गए। वे सन् 1914 से 1920 तक गंदर पार्टी के अध्यक्ष रहे। जापान, जर्मनी और हांगकांग में रहकर क्रांतिकारियों को अंग्रेज शासकों पर हमला करने के लिए प्रोत्साहित करते रहते थे। अमेरिका में उनके विचारों से प्रभावित होकर एक विद्यार्थी सरदार सिंह सराबा भारत आकर आजादी की जंग में कूद पड़ा था। सन् 1948 में भारत लौटने पर ज्ञानी ने मुंबई बंदरगाह में मातृभूमि पर कदम रखते ही घुटने टेककर “वंदे मातरम्” का उद्घोष किया था। उन्होंने सन् 1959- 60 में चायल में देश भर के करीब 500 युवाओं में देशभक्ति की भावना भरने के लिए शिविर लगाया था। उसमें पं० जवाहर लाल नेहरू भी शामिल हुए थे। 1962 में बीमारी के कारण उनका देहान्त हो गया। उनकी इच्छानुसार उनका अंतिम संस्कार कायलर गांव के पास किया गया था। उसमें डा० यशवंत सिंह परमार भी शामिल हुए थे।

आचार्य कृष्णकान्त अत्री इंग्लैंड की तीनों सेनाओं (जल, थल और वायु) आर्मड फोर्सेज़ यूनाइटेड किंगडम के हिंदू चैपलिन (धर्म गुरु) हैं। वे इस गरिमामय पद तक पहुंचने वाले पहले भारतीय हैं। वे कसौली के पास गढ़खल कस्बे के स्थायी निवासी हैं। इंग्लैंड के रक्षा मंत्रालय के अनुसार वे महाभारत और गीता आदि के श्लोंकों से सैनिकों का मनोबल कई गुणा बढ़ाते हैं। हिन्दू चैपलिन की उपाधि उनको ब्रिटिश रक्षा मंत्रालय द्वारा दी गई है।

अहिंसक तरीका ही बचा सकता है फसलों को बंदरों से। केवल बंदरों को मार कर ही फसलों की रक्षा हो सकती है, कुछ किसानों का यह विचार अधूरा है। मनुष्य का मस्तिष्क बंदरों के मस्तिष्क से अधिक विकसित है। वह फसल की रक्षा का अहिंसक तरीका भी खोज सकता है। वैज्ञानिकों को इस खोज में लगना चाहिए। बंदरों के बढ़ रहे आतंक का कारण खुद इन्सान है। मनुष्य ने बंदरों के घरों जंगलों को नुक्सान पहुंचाया है। मानव संख्या निरंतर बढ़ रही है जबकि

जंगली जानवरों की संख्या घट रही है। क्योंकि बंदरों में अपने आपको वातावरण के साथ ढाल लेने की क्षमता है। अतः उनकी संख्या बढ़ रही है। इस स्थिति में यह जरूरी हो जाता है कि हम उनके लिए उनकी जरूरत का भोजन पैदा करें। क्योंकि हमने उनके भोजन को छीनने की कोशिश की है। अगर हम किसी जीव को खाना नहीं दे सकते तो कम से कम किसी का खाना छीनें तो नहीं। वैज्ञानिक खोजों के लिए भी इस नजरिए की जरूरत है। निहत्थे जीवों पर प्रहार करना तो आसरी प्रवृत्ति ही होगी।

बीजेश्वर मंदिर प्रबंधन समिति-एक कल्याणे की दृष्टि में

कुठाड़ निवासी एक कल्याणे के अनुसार देव प्रबन्धन समिति ने अपने आपको विवादास्पद बना दिया है। उसका कहना है कि देवता के मुख्य कल्याणे अपने आपको सर्व सामान्य कल्याणों से श्रेष्ठ सिद्ध करने में लगे हुए हैं। यह एक लोकतांत्रिक परंपरा नहीं है। देवता का पुजारी वर्ग मन्दिर में ट्रस्ट बनाकर अपनी ताकत आजमा रहा है। यह सब लोग देवता के प्रति अपनी - अपनी करों (कर्त्तव्यों) को भूलकर खींचातान में लगे हुए हैं। ट्रस्ट और कमेटी दो प्रबंधक हो गए हैं। श्रद्धालुओं द्वारा चढ़ाया गया धन छिन्न - भिन्न हो रहा है। मन्दिर में होने वाले विवाह समारोहों का किराया देवकोष में जमा नहीं होता। दोनों प्रकार के प्रबंधकों ने लोगों की श्रद्धा को नुकसान पहुँचाया है। विवादास्पद विषयों में जहाँ मनुष्य बद्धि काम नहीं करती उन विषयों का निर्णय देवता से न लेकर अपनी पंचायत जोड़कर विवाद करते रहते हैं। निष्कर्ष निकालने की क्षमता किसी में होती नहीं, विवाद बढ़ता चला जाता है। कल्याणे का कहना है कि देवता से ही कोई भी अंतिम फैसला लेना चाहिए तथा यहाँ प्राचीन परम्परानुसार प्रतिदिन भण्डारे का आयोजन किया जाना चाहिए। समस्त लोग एक ही भगवान बीजेश्वर की संतानें हैं और भगवान शिव सबके पालक पिता हैं। यह सब तभी संभव हो सकता है जब सब अपनी अलग - अलग मति चलाए बिना देवता का फैसला अंतिम मानेंगे।

बीजेश्वर हैं साक्षात् भगवान महादेव

ब्रह्मा जी अपनी वाणी के कौशल से महादेव की बराबरी करने चले थे, पंचमुख से चतुर्मुख रह गए। आपकी खोज में ब्रह्मा और विष्ण को क्रमशः हंस और वराह (सूअर) का रूप धारण करना पड़ा। अलकापुरी में धनेश्वर कुबेर आपके पड़ौसी हैं। आपके घर - आंगन में कल्पवृक्ष, कामधेनु और चिंतामणियों का भंडार है। ऋद्धि और सिद्धि जैसी बहुएं घर की शोभा बढ़ा रही हैं। अमृत का खजाना चंद्रमा सिर पर शोभायमान है। जैसा आपका नाम शिव या कल्याण वैसा ही आपका काम। आपकी पूजा - अर्चना में मुक्ति से बढ़कर सुख है। समुद्र मंथन के समय काल-कूट विष की ज्वालाओं के भय से सब देवता प्राण रक्षार्थ आपकी शरण में आए थे। आप ने काल-कूट का पान कर अपना कल्याणकारी नाम सार्थक कर दिया। विश्व रूप आपका पेट न जल जाए, इसके लिए उसे कंठ में ही रोक लिया। आप पर दुःखकातर जो ठहरे। आपको कलंकित चंद्रमा को भी सिर पर धारण करने में कोई संकोच नहीं। सिर पर शीतल गंगा और गले में सांप। भगवन्, मस्तक न सही अपने चरणों को तो पखालने दो। किसी भी स्थान और समय पर आपकी पूजा करने में आपको कोई ऐतराज नहीं। आप दुनिया के राजाओं की तरह अव्यवस्थित मन वाले नहीं हैं। आपकी अपने सेवक में सदा रुचि रहती है। राजा सीमित फल दे सकता है। आप तो असीम फल देते हैं। अपना कल्याणकारी स्वरूप तक दान कर देते हैं। अपनी छाती पर यमराज के कठोर चरणों का आघात सहने के लिए मानो आपने कैलाश की ऊबड़ -खाबड़ भूमि पर चलने का पहले ही अभ्यास कर लिया था। खाते हैं खुद जहर और धतूरा और बांटते हैं अमृत या निर्भय

जीवन। दिगंबर (भौतिक विश्वरूपी वस्त्र ही पहरावा) लाज या शर्म को ढकने के लिए यदा कदा चर्म लंगोट पहन कर अत्यल्प में गुजारा करते हैं। भगवन् कम से कम अपने चरणों (कष्ट में पड़े दीन - हीन लोगों) की सेवा करने का मौका तो दो।

गायत्री माता का भण्डारा यज्ञ

सोलन से सोलह किलोमीटर दूर कून रोड पर धाला नामक स्थान पर श्रीब्रह्म गायत्री मन्दिर स्थित है। यह मन्दिर ग्राम नहरा खंडोल के निवासियों की सहमति से सर्वजन पूजार्थ एवं कल्याणार्थ बनाया गया है। माँ के दानकोष में जमा धन से मन्दिर स्थापना दिवस या शारद नवरात्र में पूजा और यज्ञ किया जाता है। स्थानीय नौजवान श्री हीरामणि अपने नेतृत्व वाले गायत्री युवक मण्डल के माध्यम से भण्डारे का आयोजन करते हैं। इस प्रकार के भण्डारे कभी व्यक्तिगत तथा कभी सामूहिक किए जाते हैं। युवकों में पर्याप्त श्रद्धा है और उन्हें आभास है कि भविष्य में घरेलू तौर पर मनाए जाने वाले उत्सव-पर्व अब ऐसे ही सार्वजनिक स्थलों पर संपन्न किए जा सकेंगे। अब तो सभी लोग समयाभाव महसूस करने लगे हैं, खासकर व्यक्तिगत आयोजनों के लिए।

ज्ञात हो कि गायत्री महापीठ जो कि इकावन शक्तिपीठों में से एक है, पुष्कर तीर्थ में स्थित है। इसे मणिबंध पीठ भी कहते हैं। कहते हैं कि वहाँ सत्ती माता का मणिबंध गिरा था। सर्वानंद इस पीठ के भैरव हैं। पुष्कर के प्रधान ब्रह्मा के मन्दिर की बायीं ओर की पहाड़ी पर गायत्री मंदिर स्थित है। भारत में गायत्री का यही प्रधान मन्दिर है। यहाँ स्नान - दानादि का सर्वाधिक फल कार्तिक पूर्णिमा को मिलता है। देवी भागवतानुसार राजा अश्वपति ने यहाँ 100 वर्ष तक गायत्री जप करके कन्या रत्न पाया था। गायत्री की साधना हेतु यह सर्वोत्तम स्थान है।

काली विज्ञान

काली माता पहली महाविद्या है जो सती माता के शव पर क्रोधवश पैदा हुई थी। ये कलन या विनाश करती हैं। ये काल (समय) की अधिष्ठात्री देवी हैं। समय कल्पित है, सूर्य की गति के कारण। काली संहार की मूर्ति हैं। ये काल (रूद्र) के ऊपर शासन करती हैं। उत्पत्ति - स्थिति और विनाश तीनों काल (समय) के अंदर होते हैं। काल या समय को रूद्र अथवा यम भी कहते हैं। शमशान, शवासन, जलती चिता, नरमुंड, रक्त, प्रलय, खुले केश, चंचल जिह्वा, काला रंग और महाकाल पर चरण रखना इनके प्रिय विषय हैं। संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार की कर्त्री हैं। शिवतत्त्व निष्क्रिय है। शंकर जी इनके अधीन हैं। सृष्टि के आदि में केवल तमोगुण अज्ञान था। ये जगत् की आदिस्वरूप हैं। इनका अजब स्वभाव है, विनाश और करूणा एक साथ। भय और आनंद का मिश्रण। परमतत्त्व में कोई विरोधाभास नहीं। मूर्ति का मतलब है सीमा के अंदर असीम का प्रवेश। काली मूर्ति का यही रहस्य है।

कंडलिनी जागरण का मनोविज्ञान

पुरुष या आत्मा का स्थान ब्रह्मरंध्र (मस्तिष्क) में है। ब्रह्म रंध्र के ऊपर सहस्रार चक्र है। आत्मा के ज्ञान का प्रकाश चित्त या मन पर पड़ता है। सहस्रार में मन के स्थिर होने पर मन की समस्त वृत्तियों या गतिविधियों का निरोध (कार्य बंद) हो जाता है। चित्त ही कारण शरीर है। चित्त के साथ सम्बन्ध करके आत्मा जीवात्मा कहलाती है। कारण शरीर या चित्त ही सारे शरीर में व्याप्त हो रहा है।

हृदय शरीर का प्रमुख स्थान है। यहीं से सारे शरीर को नाड़ियाँ जाती हैं। सुषुप्ति अवस्था में जीवात्मा हृदय में, जाग्रत में नेत्र में और संप्रज्ञात समाधि में आज्ञाचक्र या दिव्य शिवनेत्र में रहता है।

सुषुम्ना नाड़ी का मुंह साधारणवस्था में बंद रहता है तथा कुंडलिनी नाड़ी की शक्ति अविकसित रहती है। प्राणशक्ति इड़ा पिंगला नाड़ियों द्वारा चक्रों को छूती हुई ऊपर को बहती है। कूंडलिनी नाड़ी या शक्ति सुषुम्ना के प्रवेश द्वार पर अपनी पूंछ मुंह में दबाए शंखाकार में सुप्त है। अपने लपेट खोलकर अगर यह सुषुम्णा के भीतर चली जाए तो यह जाग जाती है। इसके विद्युत प्रवाह से सारे चक्र और नाड़ियां प्रकाशित हो जाते हैं। जिस चक्र पर भी यह पहुंचती है उस चक्र का मुख नीचे से ऊपर की ओर हो जाता है। सात्विक संस्कारों का उदय होने लगता है। कुंडलिनी का जागरण केवल ध्यान की परिपक्वावस्था में ही संभव है। आंतरिक तत्त्वों के प्रकाश अलोकिक होते हैं। इनसे भय करने से कुंडलिनी नाड़ी लौटकर पूर्वावस्था में आ जाती है। यह लौटने का भय केवल आज्ञाचक्र (संप्रज्ञात समाधि) तक रहता है। उसके बाद निर्भयता या अमरता प्राप्त हो जाती है। इससे मन की वृत्तियों के यथार्थ स्वरूप सामने आने लगते हैं जो कि पहले अयथार्थ थे।

कुंडलिनी जागरण का तात्पर्य है चित्त को अचित्त (निष्क्रिय) कर देना। उससमय अपनी इच्छा के अधीन कुछ भी नहीं रहता, सब कुछ परमेश्वर की इच्छा के अधीन हो जाता है। यहां से आध्यात्मिक जीवन शैली आरम्भ हो जाती है। सहस्त्रार चक्र के माध्यम से विश्वव्यापी शक्तियों से सम्बन्ध जुड़ जाता है। ब्रह्माण्ड के अंदर से शुभ शक्तियों का आकर्षण होने लगता है।

पंचभूत निर्मित अहंकारी मन महिषासुर है। अहंकार वश कुंडलिनी शक्ति (चंडी) पर आक्रमण कर बैठता है। शक्ति प्रतिकार स्वरूप उस पर प्रहार करती है। महिष या भौतिक अभिमान के टुकड़े- टुकड़े दिशाओं में फैल जाते हैं। अंत में महिषासुर माँ चण्डी की ज्योति में विलीन हो जाता है। यह तामसी तांत्रिक साधना का रूपक है। इसे रौद्र रूप निकृष्ट भक्ति साधना कहा गया है। वस्तुतः आत्मा अणु से विभु या व्यापक होना चाहती है। मार्ग अपने अपने हैं। शास्त्रों में रौद्ररूपा तामसी साधना को निकृष्ट और वर्जित बताया गया है। रावण - कंस आदि ने इसी साधना को अपनाया था जिनके विनाश के दिन पर हम पर्व मनाते हैं।

ड्यारशघाट का जग

ड्यारशघाट सोलन से 5 किलोमीटर दूर कून रोड पर स्थित है। यहाँ हर छठे महीने सामूहिक यज्ञ किया जाता है। कार्तिक मास का जग बोहच के मेले के बाद पहले इतवार को होता है। इसमें गर्ग गोत्र के अलावा अन्य अनेक लोग भी भाग लेते हैं। जग का प्रबंध देव मंदिर की प्रबंधन समिति करती है। प्रात: दस बजे लोग अपने घरेलू उत्पाद दूध, घी और अनाज आदि की भेंट लेकर मंदिर पहुंच जाते हैं। दान पात्र में जमा धन तथा चढ़ावे से अन्य जरूरी चीजें खरीद कर लाई जाती हैं। पुरोहित और तुरी के सहयोग से पूजा आरंभ होती है। ड्यारश एवं बीजेश्वर दोनों को कड़ाही (हलवा) चढ़ाई जाती है। कन्याओं एवं पुरोहित को जिमाया जाता है। पूजा के समय दिवें में खेल आती है। एकत्रित धन अनेक धार्मिक मदों में खर्च किया जाता है। दूसरा जग इसी तरीके से जेठ के महीने में किया जाता है। यहां हर संक्रान्ति को भी पूजा की जाती है। नर्मदेश्वर महादेव के मन्दिर के बड़े हाल में धार्मिक आयोजनों की पर्याप्त सुविधा

रहती है। यहाँ पाकशाला की भी व्यवस्था है। इस धार्मिक स्थल का निरंतर विकास हो रहा है। परंपरानुसार हर घर से कोई न कोई व्यक्ति पूजा, जग और समारोहों में उपस्थित रहता है तथा देवकोष में यथाशक्ति धन राशि डालता है। |

शक्तिपर्व के नौ दिन

शुक्लपक्ष के प्रथम नौ दिन-रात नवरात्र कहलाते हैं। ये वर्ष में चार बार आते हैं। इनमें से दो मुख्य हैं बाकी दो गोण। सबसे पहले चैत्र मास में आने वाले नवरात्र धर्म प्राप्ति करवाते हैं। इनमें शुभकार्य प्रशस्त हैं। ये बसंत ऋत में आते हैं तथा इसी में रामनवमी को रामचंद्र का जन्म दिवस भी मनाया जाता है। अष्टमी को विशेष रूप से महाकाली का पूजन किया जाता है। यहां बसंत ओर ग्रीष्म की संधि (मध्य) होती है। स्वास्थ्यरक्षार्थ काली मिर्च, हींग, जीरा और काले नमक के प्रयोग का विधान है। आषाढ़ के नवरात्रों में अर्थप्राप्ति हेतु गुप्त तामसी साधना की परंपरा है। आश्विन माह में काम प्राप्ति हेतु साधनाओं का विधान है। इन्हीं शारदीय नवरात्रों में दुर्गाष्टमी और नवमी को दुर्गा पूजा का विधान है। इनमें शुभकार्य वर्जित हैं। परन्तु देवठन के बाद शुभ कार्यों के मुहूर्त किए जाते हैं। यहां भी ऋतु संधिवश स्वास्थ्य में विकार की संभावना रहती है। माघ के नवरात्रों में भी मोक्ष प्रास्यर्थ गुप्त तामसी साधनाओं का विधान है। सर्वजनोपयोग एवं सात्विकता की दृष्टि से केवल दो ही नवरात्र प्रमुख हैं।

ब्राह्मण का जीवन लक्ष्य

ब्राह्मण का मूल गुण है ब्रह्मज्ञान। बह्मज्ञानी ब्राह्मण संपूर्ण ब्रह्माण्ड के अंदर एक ही ब्रह्म या परमात्मा को देखता है। वह सभी जातियों के समान विकास का पक्षधर है। उसकी प्रतिज्ञा है “सर्वे सन्तु निरामया:” अर्थात् कोई भी जीव दुःखी न हो। यही लोकतंत्र की सबसे स्वस्थ व्याख्या भी है। आजादी के बाद इस विचारधारा का पतन हुआ। ब्राह्मण सृष्टि में सबसे बड़ा भाई है। इसने सदा सभी जातियों के स्तर को बढ़ाने में हिस्सा लिया है। ब्राह्मण भ्रष्टाचार का प्रतिकार करता है। वह सदा से युगान्तरकारी मनुष्य रहा है। विदेशी आक्रमणकारियों ने ब्राह्मणों के मन्दिर, पुस्तकालय और ग्रन्थ आदि नष्ट किए थे। विकृत आरक्षणनीति ने ब्राह्मणों के विकास में बाधा पहुंचाई है।

वर्तमान समय में ब्राह्मणों की एकता अनिवार्य है। स्थानीय मंदिरों में युगांतरकारी भगवान परशुराम की मूर्तियां और चित्र स्थापित होने चाहिएं। ब्राह्मणों को भी प्रशासनिक कार्यक्षेत्र अपनाना चाहिए। युवकों को कम से कम गीता तो अर्थ सहित आनी चाहिए। ब्राह्मण संगठनों को यज्ञोपवीतादि संस्कारों के लिए सामूहिक रूप से प्रबंध करना चाहिए। निर्धन या कष्ट में पड़े ब्राह्मणों की मदद करनी चाहिए। प्रशासनिक पदों पर काम कर रहे लोगों को ब्राह्मण हित में आगे आना चाहिए। धार्मिक ग्रंथों और प्रसंगों पर व्यावहारिक अर्थों और प्रवचनों का प्रबंध होना चाहिए। प्राचीन आदर्श ब्राह्मणों की जयंतियां मनायी जाएं। सम्मेलनों में यजमानों का भी सहयोग लिया जाए क्योंकि ब्राह्मण अंततः उनके साथ मिलकर सर्वहित संपादित करते हैं।

ब्राह्मण का कर्म सत्य या सर्वजीवहित पर आधारित होता है। वह अपनी बहुमुखी प्रतिभा से धर्म और मानवता की सेवा करता है। समाज में वर्गभेद को मिटाकर सामाजिक एकता पैदा करता है। गौमाता ओर हिन्दू संस्कृति की रक्षा करता है। ब्राह्मणत्व एक दार्शनिक विचारधारा है। ब्रह्मा ने मानसिक सृष्टि से सात ऋषि ब्राह्मणों को पैदा किया। उन्हीं सप्तऋषियों से संसार में गोत्र प्रचलित हुए।

मनु ने वेदों के आधार पर मनुष्यों के गुणकर्मानुसार समाज की समुचित व्यवस्था के लिए चार वर्ण बनाए। समाज को ब्रह्मज्ञान की शिक्षा के लिए ब्राह्मण वर्ण, ब्राह्मणों की रक्षा के लिए क्षत्रिय वर्ण तथा अर्थोपार्जन के लिए वैश्य वर्ण बनाया। सबके सहयोग और सहायतार्थ शूद्र (सहायक) वर्ण बनाया। वेदों में वर्ण व्यवस्था का उल्लेख है परन्तु वर्णभेद का नहीं। मनुस्मृति मानवता का संविधान है। मूल मनुस्मृति त्रैकालिक सत्य पर आधारित है। उसमें निकृष्ट अवैदिक विषय अंग्रेजों के काल में जोड़े गए हैं। ऐसी मान्यता है। वर्ण को जाति का नाम मुसलमानों और अंग्रेज शासकों ने फूट डालने हेतु दिया है।

ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व उसके धर्म, संस्कृति और शिक्षा में निहित है। भारत ब्रह्मज्ञान के खोजियों का देश है, धर्मभूमि है। समस्त संस्कृतियों का भूल भारत ही रहा है। 'सकाशादग्रजन्मनः' से स्पष्ट होता है कि अग्रजन्मा या बड़ा भाई ब्राह्मण विश्वमानव का शिक्षक रहा है। मंत्र ब्राह्मण के अधीन होते हैं, अतः मंत्राधीन देवता ब्राह्मण के अधीन होते हैं। ब्राह्मण स्वयं देवस्वरूप है। ब्राह्मण मानवजाति का धर्म या न्याय का प्रतिनिधि है। गर्भाधान से लेकर अंत्येष्टि तक का सबका साथी ब्राह्मण है। ब्राह्मण केवल एक जातिमात्र होती है वह अपने जाति भाई रावण का विरोध नहीं करता। ब्राह्मण सदा से अन्याय और भ्रष्टाचार का विरोधी तथा सत्य ओर न्याय का पक्षधर रहा है। राष्ट्रीय धर्म की रक्षा के लिए भगवान परशुराम, चाणक्य, आदिशंकराचार्य और मंगल पांडे आदि ने आदर्श क्रान्तियां की हैं। ब्राह्मणमात्र स्वभावतः समस्त जीवों को सुखी देखना चाहता है।

इस प्रसंग में 'ब्राह्मण सभा जिला सोलन' का लक्ष्य भी अनुकरणीय है। इसकी स्थापना लगभग बीस साल पहले स्थानीय बुजुर्ग पंडितों ने विश्वकल्याणार्थ की थी। 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' इसका आदर्श वाक्य है। सर्वजन कल्याण में रुचि रखने वाला कोई भी आदमी इसका सदस्य बन सकता है। यह एक पंजीकृत संस्था है और निरंतर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रही है।

सर्वसुलभ वेदान्त विज्ञान

परमेश्वर को देखने की साधनभूत अंतःकरणरूपी आंखों में तीन दोष रहते हैं। पहला पापकर्मों की मलिनता, दूसरा मन की अति चंचलता और तीसरा अज्ञान। इन तीनों को क्रमश: मल, विक्षेप और आवरण कहते हैं। इन तीन दोषों को दूर करने के लिए ही समस्त वेदों के वेदान्त विज्ञान की प्रवृत्ति होती है।

उक्त प्रवृत्ति को एक दृष्टान्त द्वारा समझा जा सकता है। एक जल से भरी थाली है। मिट्टी के कणों के मिलने से उसका पानी गंदला है। उसके ऊपर वस्त्र है। वह जल निरंतर हवा से चंचल होकर हिलता रहता है। थाली के सीधे ऊपर सूर्य के चमकने से भी उसमें सूर्य का प्रतिबिंब नहीं दिखाई देता। क्यों नहीं दीखता कारण हैं। पहला कारण पानी गंदला है। दूसरा वह चंचल है और तीसरा उस पर वस्त्र रखा है। तीनों दोष दूर हो जाएं तो सूर्य का बिंब दिख जाएगा। इसे यों कह सकते हैं कि पहले मन मलिन है, दूसरे वह चंचल है और तीसरे उस पर अज्ञान का पर्दा पड़ा है। तीनों दोष वेदान्त सम्मत उपाय से दूर हो जाएं तो उसमें परमेश्वर का प्रकाश झलक सकता है। उक्त तीनों मन के दोषों को हटाने के लिए वेदान्त विज्ञान की प्रवृत्ति होती है जिससे उसमें परमेश्वर अपने आप झलकने लगेगा।

सर्वसुलभ तीर्थ मायापुरी या हरिद्वार

विक्रमी संवत् 329 में राजा ईसप सिंह ने हरिद्वार को मायापुरी नाम दिया था। गंगा मां शांतनु की पत्नी, भीष्म की मां, सूर्य की पुत्री और यमराज तथा यमुना मां की बहिन हैं। तीर्थ का प्रमुख स्थान हर की पौड़ी या ब्रह्म कुण्ड है। यहां सारे शहर और यात्रियों के लिए गंगा सभा आरती का आयोजन करती है। इस सभा की संस्थापना सन 1916 में पं० मदन मोहन मालवीय जी ने की थी। सुभाषघाट और नाईघाट यहां के प्रसिद्ध घाट हैं। गऊ और कुशावर्त भी उनमें शामिल हैं। मनसा देवी और अंजनी माता के मंदिर दर्शनीय हैं। यहां के अन्य दर्शनीय स्थलों में परमार्थ निकेतन, गीताभवन, शांतिकुंज, पावन धाम, भारतमाता मंदिर, स्वर्गाश्रम, लक्ष्मीनारायण मंदिर, दक्षप्रजापति मंदिर, लक्ष्मण झूला, सती कुंड, सतीधार, गुरुकुल कांगड़ी वि. वि. आदि हैं। यहां की प्रकृति अति सौंदर्यसंपन्न है और मां की गोद की तरह स्नेहदात्री है। जो तृप्ति ब्रह्मकुंड में स्नान - पूजादि तथा प्रजापति दक्ष के मंदिर के दर्शनों से होती है वह शायद ही अन्यत्र हो। अपनी अपनी आर्थिक क्षमतानुसार यहां का आध्यात्मिक आनंद लिया जा सकता है।

सनातन जीवनविज्ञान

यहां हिंदू धर्म की वैज्ञानिकता पर ब्रिटिश मूल की लेखिका डा० एनीबेसेंट के विचार प्रस्तुत हैं। भारतेतर विचारों के आगमन से पहले भी भारत की सत्ता थी और उन विचारों के चले जाने के बाद भी भारत भारत रहेगा। चेतना के तीन मौलिक संभाग हैं -ज्ञान, इच्छा और क्रिया। हिन्दू धर्म और मानव चेतना के संभाग एक जैसे हैं। इस धर्म का समाजतंत्र विशिष्ट और सनातन है। बौद्धिक अन्वेषण के लिए यहां अद्वितीय स्वतंत्रता है। विविध प्रकार के पंथ मिलेंगे। छः दर्शन वेदों पर आधारित होने पर भी वेद वचनों का निर्वचन (व्याख्या) करने में सभी पूर्णतः स्वतंत्र हैं।

भौतिक सभ्यता संसार को अभिभूत न कर ले, इस भय की निवृत्ति के लिए सर्व प्रथम वेदों का निर्माण हुआ। भातिकज्ञान की अत्यधिक विकसितावस्था में अवचेतन मन को विकसित और विशाल होकर भौतिक संसार पर विजय प्राप्त करनी होगी। विज्ञान दृश्य संसार के गुण और विस्तार का अध्ययन करता है। दर्शन शुद्ध बुद्धि से कार्यशील होता है। तत्त्व के व्यावहारिक रूप के विवरण का काम विज्ञान पर होता है। छः दर्शन एक ही सत्य को देखने के छः प्रकार हैं। सब एक दूसरे के पूरक हैं।

न्यायदर्शन सत्य के अन्वेषण के लिए तर्कशास्त्र की पद्धति से बुद्धि के प्रशिक्षण का विवेचन करता है। इसका जोड़ीदार वैशेषिक दर्शन विश्व और उसके निर्माण के सिद्धांतों का विवेचन करता है। सांख्य विकास के प्रक्रमों का सूत्रात्मक वर्णन है। पूर्वमीमांसा दृश्य - अदृश्य संसार के परस्पर सम्बन्ध का विवेचन करता है। उत्तरमीमांसा (वेदान्त) ईश्वर और मनुष्य के बीच सम्बन्धों पर विचार करता है। हर एक दर्शन के पास सत्य के प्रति एक मौलिक दृष्टिकोण है।

ऋषियों ने विकास करते करते मानवता से ऊपर उठकर अतिमानवावस्था प्राप्त कर ली थी। ज्ञान गाए के दूध के समान है और ऋषि उसके दुहने वाले। दूध में कोई अंतर नहीं होता। अनुभवकर्ता एक ही तत्त्व को विविध रीतियों से दर्शाते हैं। सत्य के सभी रूप उपयोगी हैं। इन्द्रधनुष के विविध रंग एक ही मूल श्वेत वर्ण के विविध अंग हैं।

आधुनिक मन अपने आचरण में लाने के लिए तर्कसंगत आधार चाहता है अन्यथा विवश होकर अंतःकरण विद्रोही हो जाता है। ईश्वरेच्छा से ही विकासक्रम आज इस अवस्था तक पहुंचा है। मूर्खतापूर्ण प्रश्नों के पीछे भी निहित प्रेरणा विकास मार्गपर चलने की है। जिज्ञासा जीवन के संकल्प का ही एक भाग है। जो व्याख्या कर सकता है उसे प्रश्नों की

परवाह नहीं होती। लोक या परलोक का प्रत्यक्ष ज्ञान केवल प्रयोग और अभ्यास पर निर्भर है। बौद्धिक और आध्यात्मिक विश्व के सत्यों का ज्ञान केवल योग प्रत्यक्ष से संभव है इंद्रियों की सूक्ष्मता से नहीं। चेतना की सहज प्रकृति ज्ञान है।

हिंदू धर्म की वर्तमान असमर्थता व्यावहारिक योग के ज्ञानाभाव के कारण है। पूर्वकाल में वेदान्त शिक्षार्थी की सिद्धि योग के अभ्यास से की जाती थी। योगशिक्षा के अभाव में धर्मग्रन्थों के विषयों पर विवाद स्वाभाविक है। योगाभ्यासी बोद्धिक जगत् का नेतृत्व हाथ में लेकर पश्चिमी विज्ञान के लिए नए मार्ग का उद्घाटन कर सकता है।

राम में मानवीय गुणों का चरमोत्कर्ष है। जन्म से मरण तक रामनाम काम आता है। प्रेमा भक्ति जीवात्मा को वासना (इंद्रियदासता) से ऊपर उठाकर परमात्मा से मिलाती है। वर्णव्यवस्था पर असंख्य आक्रमण हुए पर सब व्यर्थ। एक ओर सामने के दरवाजे से इसे बाहर किया जाता है, यह पिछले दरवाजे से फिर अंदर चली आती है। संपत्ति की अपेक्षा कुलपरंपरा अधिक विश्वसनीय और गरिमामय होती है। यहां पारिवारिक वृद्ध से परामर्श लेना जरूरी माना जाता है। मंत्र का स्वरानुक्रम बदलने से वह शक्तिहीन हो जाता है।

दुष्ट विचारों से निकृष्ट द्रव्यों का आकर्षण होता है। संध्या के मंत्र सूक्ष्म शरीर पर प्रभावी होते हैं। सद्विचारों से बुरे विचारों के आवेप नष्ट हो जाते हैं तथा सहायक आवेप बलवान हो जाते हैं। समस्त भारतीय नित्यकर्म करें तो भारतीयों का जीवन मधुर और स्तरीय बनेगा। श्राद्धमंत्रों से भुवलोक में उत्पन्न आवेपों से जीवात्मा का प्रेतलोक से पितृलोक होकर स्वर्गलोक में जाने का मार्ग प्रशस्त होगा। तुच्छ मतभेदोंपर कटु विवादों से सिद्धान्त की बातें उपेक्षित हो जाती हैं। महाविद्यालयीय पाठ्यक्रमों के माध्यम से सनातन और सार्वभौम तथ्यों की सुरक्षा होनी चाहिए। भारत और हिन्दू धर्म दोनों एकरूप हैं। हिन्दू जन्मसिद्ध होता है, बनाया नहीं जा सकता। पांडित्य गैर हिन्दू को हिन्दू नहीं बना सकता। भारत में नए मत, संप्रदाय और वंश न भारत के अतीत में थे और न भविष्य में रहेंगे। यहां के इतिहास, साहित्य, कला और स्मारकों में प्रत्येक पर हिन्दू धर्म की छाप है। यहां आक्रामक इस्लाम आया और उसके जाने पर भी भारत भारत है। भारत जस का तस है। हिन्दू धर्म का त्याग भारत मां के हृदय में छूरा घोंपने के समान है। प्राचीन धर्म के ऊपर भारत के प्राण निर्भर हैं। अन्य किसी भी धर्म की नाड़ियां इतनी श्रेष्ठ नहीं हैं कि उनमें आध्यात्मिक रक्त बहाया जा सके। ॥। "वंदे मातरम्"

गायत्री संध्या का मनोविज्ञान

स्नान करते हुए गंगादि तीर्थों से प्रार्थना की जाती है कि आपका पवित्र जल मेरे स्नान जल में आए और मेरे शारीरिक और आंतरिक या शरीर, मन और आत्मा के दोष (मलिनताएं) धुल जाएं। शिखा को बांधते हुए परमशक्ति परमात्मा से प्रार्थना की जाती है कि वे मेरी शिखा में रह करके मेरे तेज (शक्ति) को बढ़ाएं। चंदन (तिलक) से प्रार्थना की जाती है कि वह हमारी विपत्तियों का नाश करके हमें लक्ष्मी (सर्वविध सुख) प्राप्त करवाएं। गणेशादि पंचायतन देवताओं की पूजा में उनसे प्रार्थना की जाती है कि वे अपने से संबंधित पांच महाभूतों (शरीर के घटकों) से हमारे जीवन की जरूरतें पूरी करते रहें। पूजा के पांच या सोलह उपचार (पवित्र वस्तुएं) देवता की प्रसन्नता हेतु समर्पित किए जाते हैं। तीन बार आचमन शरीर, मन और आत्मा के दोषों की शुद्धि करते हैं। विष्णुके स्मरणपूर्वक अपने ऊपर तथा सामग्री पर सब प्रकार की पवित्रता हेतु जल छिड़का जाता है। ऋषि आदि के स्मरणपूर्वक वैदिक मंत्र का आसन

पर बैठने के लिए विनियोग या प्रयोग किया जाता है। धरती माता से हमें धारण करने तथा आसन को पवित्र करने के लिए प्रार्थना की जाती है। सारे संसार को जल देने या बरसाने वाले सूर्य भगवान् से निवेदन किया जाता है कि कृपया आप यहां उपस्थित होकर मेरे द्वारा दिया जा रहा जलार्घ्य स्वीकार करो। अहंकारियों के लिए भयानक महाकाल रूप भैरव देवता को संध्याकर्म में प्रवेश से पूर्व प्रणाम निवेदन किया जाता है। अर्घ में तीन पवित्र वस्तुएं तिल, जौ और कुशमोटक रखकर संध्याकर्म के कर्ता स्थान और समय का स्मरण करके संध्या करने का संकल्प या प्रतिज्ञा की जाती है। प्राणायाम के माध्यम से जीवन को धारण करने वाली प्राणशक्ति को सृजन-पालन और संहार करने वाली शक्ति के साथ जोड़ा जाता है। संहार या मृत्यु भी सनातन जीवन का एक अंग है। रस या अमृत रूप परमात्मा का ध्यान करते हुए आचमन (आत्मशोधन) किया जाता है। उदय होते हुए भगवान् सूर्य से प्रार्थना की जाती है कि हम स्वस्थ रहकर सौ वर्षों तक जीएं। सूर्यमण्डल में स्थित ब्रह्मलोक निवासिनी अति सुंदर बालिकारूप गायत्री मां का ध्यान किया जाता है। अमृत स्वरूपा परमात्मशक्ति गायत्री मां का आह्वान (बुलाया) किया जाता है। गायत्री मां से निर्मल आत्मा को ढकने वाले दोषों को हटाने के लिए प्रार्थना की जाती है। वैदिक गायत्री मंत्र के ऋषि आदि के स्मरणपूर्वक उसका जपकार्य में विनियोग या प्रयोग किया जाता है। मस्तक में तिलक के स्थान पर मंत्रार्थरूप दिव्य प्रकाश बिन्दु का ध्यान करते हुए मंत्र का मन में उच्चारण किया जाता है। माला पूरी करके इन्द्र का स्मरण करके पृथ्वी पर जल डालकर उसे (संचित शक्ति को) मस्तक पर धारण किया या लगाया जाता है। गायत्री माँ से प्रार्थना की जाती है कि वे पांव से सिर तक हमारे शरीर के सभी अंगों की रक्षा करें। इसके बाद हमारे जीवात्मा को शुद्ध या विकसित करने में सहयोग देने वाले ब्रह्मादि देवता, सनकादि ऋषि, यमराजादि यम, पितृवंश, मातृवंश, गुरुवंश और समस्त जीवों - अजीवों की तृप्ति पूर्वक प्रसन्नता के लिए तर्पण या जल समर्पित किया जाता है। समस्त जीवों के लिए सुख की कामना करते हुए क्षमायाचना पूर्वक गायत्री मां से प्रार्थना की जाती है कि वे कृपया सुखपूर्वक वापिस अपने लोक में चली जाएं, पुनः आने के लिए। विनम्रतापूर्वक , बह्मरूपा परमात्मशक्ति को सधन्यवाद प्रणाम निवेदन किया जाता है। अग्नि देवता को नैवेद्य चढ़ाकर और गायों को ग्रास (रोटी) देकर प्रसादामृत ग्रहण किया जाता है।

शरड़ घम् भैं रा मतलब (व्यावहारिक विद्वत्ता रि कहाणि)

प्राणे वकता रि बात असो। पाड़ि इलाके रा एक आदमि पड़नि री खातर काशी खे गोआ। तेती पड़-लिख रो से बहुत विद्वान ओआ। तेसरि ख्याति शुण रो एक बुजुर्ग तेसके मिलनि आया। तिणिए तेसदे एक सवाल पूछा कि बताव "शरड़ घम् भैं" रा का मतलब ओ। नवा विद्वान सोचणि लगा जै तिणिए काशी जाए रो सारे वेद- शास्त्र छाण मारे पेरि इ शब्द तो कोई शुणे न देखे। तेसके बड़ि निराशा ओई । से आपणा जोला- जंडा चक रो पौंच गोआ आपणे गुरुजना काए काशी मांए। तीना काए तिणिए से सवाल ज्यों का त्यों राख दीता। गुरु बि का करो, शुण दे रोए आपणे माथे। आखिर एकी गुरु जीए तेसदे पूछा कि पहाड़ा मांए गौर किशे जे ओ। तिणिए जवाने बतावा जे तेती रे गौर छापरा आले ओ अरो तेती ईशा ईशा पशुपालन ओ। गुरु जी खे समजदे देर न लगि। बोले जे बषकाला रि बात असो, तुंबड़े रि बेल छापरा पांएं छवावि दि थि। परावली हेठे बेडा थी बानी दी। अचानक तेज अवा चलनि साय एक बडा तुंबड़ा रीड़ा अरो शरड़ री आवाजा साए घम दे रो बेडा पाएन् बजा। तिंया रे करवि भैं। इशि जि गटना गटि थि, अरो कावत बण गुई 'शरड़ घम भैं'। नौजवान इ सारा किस्सा समज रो आपणै गांवा खे गोआ अरो सारि बात तेस बजुर्गा काय

राखि। तेसरे सवाला रा जबाब पाए रो बुजुर्ग बड़ा खुश ओआ। तेते दे बाद तिणिए बजुर्गे तेसरी विद्या रा खूब प्रचार किया। एस व्यावहारिक सवाला साए खुश ओए रो तिणिए तेस बजुर्गा रे चरण बि छुएं अरो काशी खे जाए रो आपणे गुरुजना रा बि खूब आदरा सत्कारा साए धन्यवाद किया। एबे से नवा विद्वान समझ गोआ था कि बिना बड़े रा आदर किए कोएं बि विद्या व्यावहारिक नी बणदि अरो ना ही से विद्या कसि लोका रे कामे आंवदि। जय मां सरस्वती।

परोपकार की भावना से बनी बावड़ी

लगभग सौ साल पहले की बात है। सोलन के पास ग्लां नामक गांव से ब्राह्मण परिवार के एक व्यक्ति देवथल से देवदर्शन करके पैदल वापिस घर आ रहे थे। रास्ते में धार गांव के पास उन्होंने एक पानी का स्त्रोत देखा और वहां आराम करने बैठ गए। वहां के मधुर पानी और प्राकृतिक सौंदर्य से प्रभावित होकर मन ही मन बीजेश्वर देवता से प्रार्थना करने लगे कि अगर मेरे पुत्र हो जाए तो मैं यहां एक बावड़ी का निर्माण कर दूंगा। भगवदिच्छा से उनकी कामना पूरी हो गई। कहते हैं कि आज भी वहां जो पुरानी पक्की बावड़ी बनी है वह उन्हीं की देन है। केवल इतना ही नहीं उन्होंने उस बावड़ी के पास सप्ताह यज्ञ या श्रीमदभागवत् की कथा का आयोजन भी करवाया था। बावड़ी निर्माता उन बुजुर्ग के पौत्रादि आज भी अपने महान् पूर्वजों की स्मृति में उस स्थान की फिर से शोभा बढ़ाने की इच्छा रखते हैं। आशा है देवता उनकी इस परोपकार भावना को प्रबलता देकर औरों को भी इस प्रकार परोपकार की पारंपरिक प्रेरणा देते रहेंगे। जय बीजेश्वर।।

अपनी सांस्कृतिक परंपराओं को कैसे बचाएं

आजकल सेवानिवृत्ति पर उस परमात्मा का यज्ञ रूप में अवश्य धन्यवाद करना चाहिए जिसने हमें रोजगार दिया था, भले ही वह सत्यनारायण की कथा हो या किसी मंदिर में भंडारा आदि। धार्मिक कार्यों आदि में किसी चीज़ को काटने से हानिकारक नकारात्मक भावना का प्रचार - प्रसार होता है। भारतीय परंपराओं में ऐसा करना निषेध माना गया है। जैसे कि लाल फीता काटना आदि। दीपक या मोमबत्ती बुझाना आदि भी नकारात्मक हैं। इनके प्रभाव भी नकारात्मक फल या असफलता देते हैं। उधार लेना और देना दोनों बुरे हैं। इससे किसी का भला नहीं होता, न लेने वाले का न देने वाले का। कोई भी देने वाला भले ही यथाशक्ति सहायता राशि मुफ्त दान में दे दे परन्तु उधार न दे। आज के युग की यही मांग है। विवाहादि समारोहों में बजने वाले बाजे या स्पीकर अब हल्की मधुर आवाज की अपेक्षा करते हैं। रात्रि में होने वाले कार्यक्रम भी नशों को प्रोत्साहन दे रहे हैं। इनसे सबको बचना चाहिए और यथा संभव उत्सव दिन में ही निभाने चाहिए। करवा आदि अनेक धार्मिक व्रत ऐसे हैं जो लंबी चौड़ी औपचारिकताओं से संपन्न होते हैं। आम तौर पर गरीब आदमी के लिए तो यह व्रत अति कठिन है। हमें किसी वटसावित्री जैसे वैकल्पिक व्रत की खोज अवश्य करनी चाहिए जो गरीब - अमीर सबके लिए सुलभ हो और समाज में समता लाए। जीवन में भय सबसे हानिकारक चीज है। प्राय: भय से ही सर्वाधिक नुकसान होते हैं। हम भगवान से अगर कुछ मांगें (वैसे मांगना बुरा है) तो भयसे छुटकारा मांगें। कल्याण होगा। || वन्दे मातरम् ||

गायत्री मां के वरदान

(हमारी चौबीस इच्छाओं के प्रतिनिधि देवता और अक्षर)- इच्छा देवता अक्षर; सफलता गणेश तत्; पराक्रम नरसिंह स; पालन विष्णु वि; स्थिरता शिव तुः; योग कृष्ण व; प्रेम राधा रे; धन लक्ष्मी णि; तेज अग्नि यम्; रक्षा इन्द्र भ;

बुद्धि सरस्वती र्गो; दमन (दुर्गुण का) दुर्गा दे; निष्ठा हनुमान् व; गंभीरता पृथ्वी स्य; प्राणशक्ति सूर्य धी; मर्यादा राम म; तप (श्रम) सीता हि; शान्ति चन्द्रमा धि; काल /निर्भयता यम यो; रचना /उत्पादन ब्रह्मा यो; ईश /नियंत्रण वरूण नः; आदर्श नारायण प्र; साहस हयग्रीव चो; विवेक हंस /सोऽ हं द; सेवा तुलसी यात्; निष्कामना/सम्पूर्णता पुरुष/ब्रह्म अक्षरातीत।

पंरपरा और व्यवहार का आपस में अटूट संबंध है। उसी तरह जैसे सोने और आभूषण का। सोने में आभूषण और आभूषण में सोना रहता है। पंरपरा में व्यवहार और व्यवहार में पंरपरा रहती है। परंपराएं सोने की तरह हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप रूप बदलती रहती हैं।

परमगुरुप्रसादोपनिषत

ऊँ श्री परमगुरवे नमः। ब्रह्म ईश्वरः महाकालो वा प्रथमः देवः। स एव परमः गुरुः । स एकाकी अंडरूपं आसीत। द्वितीयः कः अपि न आसीत्। तस्य मनः न लगति स्म। सः द्वितीयस्य इच्छां अकरोत्। तत् अंडं कंपनेन सह स्फूटितम्। द्विधम् च अभवत्। कंपने ओम् ध्वनिः अभवत्। अयं अद्य अपि अस्ति सदा भविष्यति च। स्फोटात् पूर्वम् अयं अप्रकटः आसीत्। स्फोटेन प्रकटः जायते। अयम् नित्यः। महाकालनियमानुसारं प्रकटः अप्रकटः च जायते। परं नश्यति न। इयम् एवं अस्य नित्यता, सनातनता, अनादिता अनंतता च।

ईश्वरस्य इच्छाशक्त्या जातं द्वितीयं खंडम् तस्य पत्नी प्रकृतिः वा उच्यते। वस्तुतः इच्छाशक्तिः एव तस्य पत्नी, संसारस्य माता च। ईश्वरस्य इच्छा बलीयसी। ईश्वरेच्छापुत्री प्रकृतिः संसारः वा। तेन संसारेण सह सः आनंदं अनुभवति। अंडात् अंडं, अंडात् अंडं एवं अगणितानि अंडानि जायन्ते। क्रमशः स्फोटाः ध्वनयश्च जायन्ते। ध्वनिः एकाकी न अस्ति। तस्मिन् प्रकाशः गतिः चापि वर्तते। प्रत्येकः अणुः ध्वन्यादि त्रयेण संयुक्तः अस्ति। सर्वेशब्दाः , विज्ञान प्रयोगाः जीवनव्यवहाराश्च ध्वन्यादि त्रयेण संपद्यन्ते।

ब्रह्मणः प्रकृतिः स्वभावो वा सत्वरजस् तमस्त्रिगुणरूपः। ज्ञानं सत्वगुणस्य परिणामः। तेन ब्रह्मणः जाताः जीवाः स्वपितुः आनंदस्य इच्छां अनुभवन्ति। अतः प्रत्येकः जीवः ब्रह्मणः आनंदाय स्वकार्यं करोति। परमेश्वर प्रीति अर्थ एव तस्य कर्म संकल्पः। जीवस्य प्रत्यक्षं शरीरं जडरूप तमोगुणस्य परिणामः। इदं स्वाभाविक कार्येण परमगुरोः कार्यं साधयति। अतः तस्य कार्यार्थं शरीरं आदरणीयम्। यदा जीवः ईश्वरः वा स्वोत्पादितया पत्न्या संसारेण च आनंदतृप्तो भवति तदा सः पुनः एकाकी भवितुम् इच्छति एकाकी जायते च। य एतद् विजानाति तस्य मरणात् भयं न जायते। तस्य गुरूतत्त्वं प्रसीदति। सः नित्यः सनातनः ईश्वररूपः जायते, जीवति स्वपिति च। तस्य कार्यं ईश्वरस्य कार्यं संपद्यते। सः ईश्वरवत् नित्यं संसारस्य प्रकटतां अप्रकटतां पश्यति अनुभवति च। इति परमगुरु प्रसादोपनिषत्।

सारगर्भितं भगवत्स्मरणम्

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्। तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः।। आयातु वरदा देवी अक्षरबह्मवादिनी। गायत्री छन््दसां माता ब्रह्मयोने नमोस्तु ते।। निर्गुणः परमात्मा तु त्वदाश्रयतया स्थितः। तस्य भट्टारिकासि त्वं भुवनेश्वरि भोगदा।। जगन्माता च प्रकृतिः पुरुषश्च जगत्पिता। गरीयसी जगतां माता शतगुणैः पितुः।। सर्वात्मा हि सा देवी सर्वभूतेषु संस्थिता। गायत्री मोक्षहेतुश्च मोक्षस्थानमसंशयम्।। 6. गायत्री परदेवतेति गदिता ब्रह्मैव चिद्रूपिणी। सोऽ हमस्मित्युपासीत विधिना येन केनचित्।। जयन्ती मंगला काली भद्रकाली कपालिनी। दुर्गा

क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तु ते।। सृष्टि स्थितिविनाशानां शक्ति भूते सनातनि। गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽ तु ते।। यो देहमर्पयति चान्य सुखस्य हेतोः। तस्मै वदान्यगुरवे तरवे नमस्ते।। भिषजां साधुवृत्तानां भद्रमागमशलिनाम्। अभ्यस्तकर्मणां भद्रं भद्राभिलाषिणाम्। ॐ नमोऽ स्त्वनंताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षि शिरोरूबाहवे। सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटियुगधारिणे नमः।। स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्ताम् न्यायेन मार्गेण महीं महीपाः। गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यम् लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु।। ॐ द्यौ: शन्तिरन्तरिक्ष ग्वम शान्तिः पृथिवी शान्तिर्विश्वे देवा: शन्तिर्बह्म शान्ति: सर्व ग्वम शान्ति: शान्ति रेव शान्तिः सा मा शान्ति रेधि।। सुशान्तिर्भवतु।। नमस्ते सते ते जगत्कारणाय नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय। नमोऽ द्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।। सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग भवेत्।।

सच्चिदानंद भगवान् की जय, भारतमाता की जय, गोमाता की जय, गंगामाता की जय, श्री रामजन्मभूमि की जय, पवनसुत हनुमान की जय, भक्तों की जय, भ्रष्टाचार / आतंक / अधर्म का नाश हो, प्राणियों में सदभावना हो, विश्व का कल्याण हो, शांति /सनातन धर्म की जय हो, भारत अखंड हो, हर हर महादेव।

सर्व ब्राह्मण वन्दना

पंचगोड़ सारस्वत कान्यकुब्ज सरयूपारीण मैथिलेभ्यो नमः। आद्यगौड़ श्री गौड़ गुर्जर गौड़ औदीच्यभार्गव चरणकमलेभ्यो नमः। सहस्त्रौदीच्य गर्गपाराशर कपिल अर्जरियाँ वशिष्ठ शर्मभ्यो नमः। मुहियाल मधुपुरी हरियाणावी, महाराष्ट्रोत्कल अंगबंगकलिंग ब्राह्मणेभ्यो नमः। नागदाहूलघुवृहत सम्भदि विप्रनार्मदेयेभ्यो नमो नमः। नरेशमेनारियापालीवाल अग्निहोत्रिचरणेभ्यो नमः। पंचद्रविड़ तैलंगंद्रविण नम्बूद्री राव सनाढ्येभ्यो नमः। जुझोतिया सर्वरिया श्रीमाली वावीरा चौबीसा बावनीर खेड़ेभ्यो नमः। पारीक दायमासिर बवाल पड़ीकर सिसोदियानागरेभ्यो नमः। शिवनाजल वृत्तधारी दशौरा छन्यात्रि अत्रि औदुम्बरेभ्यो नमः। काश्यप भारद्वाजादि सप्तर्षिगोत्र ब्राह्मण परम्परागत श्रेष्ठ विप्रेभ्यो नमः। मणिपुर आन्ध्र कर्नाटक केरलमद्रविप्रेभ्यो बुन्देलखण्ड पुष्कली पौरवरेभ्यो नमः। पूंछी डोंगरादिजम्मु काश्मीरी ब्राह्मणेभ्य: जैतुपुरा जौधपुरा व्यासभूदेवेभ्यो। वेदी द्विवेदी चतुर्वेदी त्रिवेदीवैदिकेभ्यो खण्डल शाकद्वीपीयेभ्यो नमः। पुरोहित जोशी शाण्डिल्यगौतमादि वाचिभ्यो देशविदेशस्थ सर्वविप्रेभ्यो नमः। पाण्डव मालव गढ़वालीयेभ्यो मरैया पचौरी वोहरा भाभड़ा ओझा पाठकवाचिभ्यश्चनमः। नेपाली पार्वतेभ्यो देशमुख देशपाण्डेदेसाई मुखर्जीउपाध्यायादिभ्यो नमः। राजस्थान पंचनद असम हिमगिरी गुजरात वासिभ्य: कतिपय त्यागी आंगिरस वाचकेभ्योपि नमः। अन्तर्राष्ट्रीय ब्राह्मणेभ्यो कर्मणाहितैषिभ्यो द्विजकल्पेभ्यो ब्रह्मविद्भ्यो नमोनमः। . ब्राह्मणानाम्च नामानि मंगलाचरणानिच। यः पठेत् प्राप्नुयादूर्जा बह्मतेजो निरन्तरम्। बह्मा परशुरामश्च गायत्री चर सरस्वती। सप्तर्षयः प्रसीदन्ति जपात् शम्भुश्च तुष्यति।

भगवान् श्री परशुरामजी की आरती

जय जय असुरारी जय सुखकारी, जय जमदग्नि कुमारा || जय भृगुनन्दन जय दुखभंजन, अमित प्रताप तुम्हारा ॥ ॥ कर में धारे वेद-संहिता शस्त्र-शास्त्र के अधिकारी || शीश जटा मुखर तेज विराजें,गो ब्राह्मण हितकारी ।। ।। जय अग्नि स्वरूपा, दिव्य अनूपा महाशौर्यबलवाना || जय मुनिगण पोषक सन्त प्रतोषक जय गुण बुद्धि निधाना।। ॥। अतुलित बलधामा, मन अभिरामा, अखिल भुवन बलवन्ता ॥ जय विद्या वारिधि, महाज्ञान निधि गावहिं वेद अनन्ता ॥ ॥ द्रोण

भीष्म बल कर्ण शिष्य सब एक से एक तुम्हारे || अजर अमर ऋषिवर्य, परशुधर प्राण स्वरूप हमारे ॥॥ तिलक भाल मृगछाल मेखला, नयनरक्त अरूणारे || जय जय जय नायक सब सुखदायक जय रेणुका दुलारे ॥ ॥ अभय प्रदायक जय वरदायक ब्रह्म वंश उजियारे || परशु राम श्री परशुराम के बोलो सब जैकारे ।। ।। (श्री परशु राम की जय) ॥ जो बोले सो अभय ॥। सौजन्य : ब्राह्मण अन्तर्राष्ट्रीय

कुछ लेखक अनुमोदित साहित्यिक पुस्तकें-

1) **Love story of a Yogi- what Patanjali says**
2) **Kundalini demystified- what Premyogi vajra says**
3) **कुण्डलिनी विज्ञान- एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान**
4) **The art of self publishing and website creation**
5) **स्वयंप्रकाशन व वैबसाईट निर्माण की कला**
6) **कुण्डलिनी रहस्योद्घाटित- प्रेमयोगी वज्र क्या कहता है**
7) **बहुतकनीकी जैविक खेती एवं वर्षाजल संग्रहण के मूलभूत आधारस्तम्भ- एक खुशहाल एवं विकासशील गाँव की कहानी, एक पर्यावरणप्रेमी योगी की जुबानी**
8) **ई-रीडर पर मेरी कुण्डलिनी वैबसाईट**
9) **My kundalini website on e-reader**
10) **शरीरविज्ञान दर्शन- एक आधुनिक कुण्डलिनी तंत्र (एक योगी की प्रेमकथा)**
11) **श्रीकृष्णाज्ञाभिनन्दनम**
12) **सोलन की सर्वहित साधना**
13) **योगोपनिषदों में राजयोग**
14) **क्षेत्रपति बीजेश्वर महादेव**
15) **देवभूमि सोलन**
16) **मौलिक व्यक्तित्व के प्रेरक सूत्र**
17) **बघाटेश्वरी माँ शूलिनी**
18) **म्हारा बघाट**
19) **भाव सुमन: एक आधुनिक काव्यसुधा सरस**
20) **Kundalini science~a spiritual psychology**

इन उपरोक्त पुस्तकों का वर्णन एमाजोन, ऑथर सेन्ट्रल, ऑथर पेज, प्रेमयोगी वज्र पर उपलब्ध है। इन पुस्तकों का वर्णन उनकी निजी वैबसाईट https://demystifyingkundalini.com/shop/ के वैबपेज "शॉप (लाईब्रेरी)" पर भी उपलब्ध है। साप्ताहिक रूप से नई पोस्ट (विशेषतः कुण्डलिनी से सम्बंधित) प्राप्त करने और नियमित संपर्क में बने रहने के लिए कृपया इस वैबसाईट,"https://demystifyingkundalini.com/" को निःशुल्क रूप में फोलो करें/इसकी सदस्यता लें।

सर्वत्रं शुभमस्तु

बघाटी जन जीवन में शक्तिपूजा एवं आध्यात्मिक परंपराएं